त्राटक साधना के चमत्कार



त्राटक साधना के चमत्कार

(त्राटक साधना की प्राचीन व अर्वाचीन
चमत्कारी घटनाओं का प्रथम संग्रह)

लेखक :

डॉ० चमनलाल गौतम

रचयिता : त्राटक से मानसिक शान्ति, त्राटक द्वारा काम रूपान्तरण,
त्राटक से समाधि, ध्यान की सरल साधनाएँ, ध्यान के गहरे
प्रयोग, ध्यान से चिन्ता निवारण, कुडलिनी जागरण,
नाद योग, योग महाविज्ञान, प्राणायाम के
असाधारण प्रयोग, योगासन से रोग
निवारण आदि।

प्रकाशक :

संस्कृति संस्थान

ख्वाजाकुतुब, (वेद नगर) बरेली—२४३००३ (उ०प्र०)

फोन नं० ४२४२

प्रकाशक :
डॉ० चमन लाल गौतम
संस्कृति संस्थान
ख्वाजा कुतुब, (वेद नगर) बरेली—२४३००३ (उ० प्र०)

✻

लेखक :
डा० चमनलाल गौतम

✻

✻

प्रथम संस्करण
सन् १९८१

✻

मुद्रक :
शैलेन्द्र बी. माहेश्वरी
नवज्योति प्रेस
सेठ भीकचन्द मार्ग, मथुरा

✻

मूल्य : चार रुपये पच्चीस पैसे मात्र ।

भूमिका

योग साधना के परिणाम स्वरूप साधकों को अनेक असाधारण क्षमताएँ प्राप्त हो जाती हैं, इन्हें ही विभूति या सिद्धि कहकर पुकारा जाता है। कुछ लोगों की धारणा है कि योगियों के जीवन के चमत्कार के प्रसंग उनके अन्ध-श्रद्धालु शिष्यों द्वारा बाद में जोड़ दिये गये हैं। उनका वास्तविकता से कोई सम्बन्ध बताना सम्भव नहीं और विज्ञान के स्थूल उपकरणों द्वारा उनका समाधान होना कठिन है। डॉ॰ हॉरनाक ने लिखा है कि चमत्कार की घटना ही सम्भव नहीं। स्पिनोजा मानते हैं कि प्रकृति में ऐसा कुछ भी नहीं घटता जो इसके सार्वभौम नियमों के प्रतिकूल हो। फिर भी हॉरनाक की यह मान्यता है कि संसार में अलौकिक घटनाएँ घट सकती हैं। यूलर, हालर, बोनेट आदि विज्ञानाचार्यों के मत में चमत्कारों का घटना असम्भव नहीं। हाँ, ब्रूअर ने तो डिक्शनरी आफ् मेराइफिलस तथा निकल्सन ने इस्लेमिक मिस्टसिज्म में ऐसी अनेक घटनाओं का उल्लेख किया है जो योगियों की योग-विभूतियों को प्रमाणित करती है। स्वयं ईसा और मूसा का जीवन चमत्कारों से परिपूर्ण बताया जाता है। महर्षि पतंजलि ने योग-दर्शन के समाधिपाद में पाँच प्रकार की सिद्धियों का उल्लेख किया है।

स्वामी विष्णुतीर्थ के शब्दों में, 'समाधि द्वारा ज्यों-ज्यों देह, इन्द्रियाँ, मन और बुद्धि में आत्मा की अनन्त शक्ति का विकास होता है, त्यों-त्यों योगी में असाधारण सामार्थ्य दिखने लगती है। यह सामर्थ्य आत्मा का ही प्रकाश होती है। परन्तु सामान्य न होने के कारण उसे विभूति अथवा सिद्धि कहते हैं। वे व्युत्थान दशा में अलौकिक सामर्थ्य देती हैं। अतः व्यावहारिक दृष्टि से समाधि से आने वाली सिद्धियाँ, श्रद्धा, उत्साह,

प्रसन्नता देकर साधक को साधन में प्रवृत्त रखने के कारण सहायक होती है। योग-शास्त्रों में जिन सिद्धियों का वर्णन आता है, वे मन की एकाग्रता का ही सहज परिणाम होती हैं। साधारण व्यक्तिय को यह सिद्धियाँ असम्भव इसलिए दिखाई देती हैं क्योंकि मन की चंचलता को नियन्त्रण में रखना अन्यन्त कठिन होता है। अर्जुन ने भी भगवान कृष्ण से गीता में यही कहा था कि यह मन अत्यन्त चंचल, अस्थिर, शक्तिशाली व दृढ़ है। इसे नियन्त्रण में लाना व स्थिर रखना उतना ही कठिन है, जितना वायु की गति को रोकना।

वेद शास्त्रों ने तो मन की परम सिद्धिदायक असाधारण शक्ति को स्वीकार किया ही है। वैज्ञानिकों ने भी मन की शक्ति की नाप तौल करने का प्रयत्न किया है। उनके अनुसार मन भौतिक शरीर की चेतन शक्ति है—आइन्स्टीन के शक्ति सिद्धान्त के अनुसार कुछ भार वाले एक परमाणु में ही प्रकाश की गति × प्रकाश की गति अर्थात्—१८६००० × १८६००० कैलोरी शक्ति उत्पन्न होगी। १ पौण्ड पदार्थ की शक्ति १४ लाख टन कोयला जलाने में जितनी शक्ति मिलेगी, इतनी होगी। यद्यपि पदार्थ को पूरी तरह शक्ति में बदलना सम्भव नहीं हुआ तथापि यदि इस शक्ति को पूरी तरह शक्ति में बदलना सम्भव होता तो एक पौण्ड कोयले में जितना द्रव्य होता है उसे शक्ति में बदल देने से सम्पूर्ण अमेरिका के लिए १ माह तक के लिये बिजली तैयार हो जाती। मन शरीर के द्रव्य की विद्युत शक्ति है। मन की एकाग्रता जितनी बढ़ेगी शक्ति उतनी ही तीव्र होगी। यदि सम्पूर्ण शरीर को इस शक्ति में बदला जा सके तो १२० पौण्ड भार वाले शरीर की विद्युत शक्ति अर्थात् मन सामर्थ्य इतनी अधिक होगी कि वह पूरे अमेरिका को लगातार १० वर्ष तक विद्युत देता रह सके। इस प्रचंड क्षमता से ही भारतीय योगी ऋषि महर्षि शून्य आकाश में स्फोट किया करते थे और वे किसी को एक अक्षर का उपदेश दिये बिना अपनी इच्छानुसार अपने संकल्प बल से

समस्त भूमण्डल की मानवीय समस्याओं का संचालन और नियन्त्रण किया करते थे। शेर और गाय को एक ही घाट का पानी पिला देने की प्रचंड क्षमता इसी शक्ति की थी। मन को ही वेद में 'ज्योतिषां-ज्योति' अर्थात् प्रकाश का भी महाप्रकाश कहा है। डा० वैनेटंन ने उसे महान् विद्य ुत शक्ति (माइन्ड इज ए ग्रेट इलेक्ट्रिकल फोर्स) से सम्बोधित किया है।

ऊपर मन की शक्तियों का जो वर्णन किया गया है, वह एकाग्र हुए मन की शक्ति का परिचय है। मन की शक्तियों को विकसित करने के लिए उसका एकाग्र होना आवश्यक है।

प्रस्तुत पुस्तक में त्राटक शक्ति की जिन सिद्धियों, चमत्कारों और सफलताओं का वर्णन किया गया है, वे भी मन की एकाग्रता का ही परिणाम है। इन्हें असम्भव अथवा कल्पना मानना उचित नहीं है। जितनी तपस्या प्राचीन योगियों ने की है, उतनी साधना करने से उन सिद्धियों को अब भी प्राप्त करना सम्भव हो सकता है।

इस तथ्य को सभी योगी स्वीकार करते हैं कि जितनी भी सिद्धि दायिनी योग साधनायें हैं, उन सबमें सरल, शक्तिशाली और प्रभावोत्पादक योग-साधना त्राटक ही है क्योंकि त्राटक से एकाग्रता सहज में ही प्राप्त होती है। त्राटक द्वारा मन की एकाग्रता प्राप्त करके जीवन के हर क्षेत्र में सफलतायें प्राप्त करके साधना के चमत्कारों को स्वयं अनुभव किया जा सकता है।

—चमनलाल गौतम

विषय-सूची

त्राटक साधना के चमत्कार

कपिल का साठ हजार सगर पुत्रों को भस्म करना

त्राटक एक महत्वपूर्ण साधना है जो अनादि काल से की जाती रही है। बड़े-बड़े योगी, तपस्वी, संन्यासी, साधकगण इस साधना के द्वारा अद्भुत सिद्धि प्राप्त करते रहे हैं।

हठयोग साधक भी त्राटक-साधना करते रहे हैं। इसलिए योगग्रन्थों में भी त्राटक विधि का उल्लेख मिलता है। प्राचीन ऋषि-मुनि तो इस साधना के द्वारा अभूतपूर्व क्षमताओं के स्वामी होते ही रहे हैं, वर्तमान समय में अनेक व्यक्ति इस साधना के द्वारा लाभ उठा रहे हैं। भारत, तिब्बत तथा विभिन्न पाश्चात्य देशों में भी इन साधना के प्रति जिज्ञासा बढ़ती जा रही है।

त्राटक-साधना चमत्कार पूर्ण साधना रही है। इसके द्वारा साधक की नेत्र दृष्टि अभूतपूर्व होजाती और अन्तर्दृष्टि जाग उठती है। उसमें इतनी शक्ति आजाती है कि यदि किसी को क्रोध पूर्वक देखे तो वह तुरन्त भस्म होजाय, पत्थर या वृक्ष बन जाय अथवा प्राणविहीन होकर परकटे पक्षी के समान धरती पर गिर जाय।

यदि त्राटक-सिद्ध साधक किसी को प्रेम पूर्वक देखे तो उस पर अनुग्रह की वर्षा कर सकता है। कुरूप को रूपवान और अस्वस्थ को स्वस्थ बना सकता है। यदि दान दृष्टि से देखे तो किसी के घर को वैभव-सम्पन्न किसी के खेत को हरा-भरा, किसी के सरोवर को जल से परिपूर्ण कर सकता है।

त्राटक सिद्ध योगी के रोष में विनाश, कृपा में निर्माण और उदासीनता में उदासीनता रहती है। त्राटक का साधक अपनी दृष्टि मात्र से ही सब कुछ समर्थ होता है। प्राचीन काल में तो योगी, विरागी, संन्यासी आदि ही नहीं, गृहस्थ भी त्राटक साधना किया करते थे, जिसके बल पर वे चाहिए जिससे चाहे जो कुछ करा लेते थे।

जो कार्य बड़े-बड़े शस्त्रास्त्र नहीं कर सकते, वे त्राटक योग के द्वारा किये जाते रहे हैं। जो वस्तु किसी भारवाहक द्वारा वहन करनी सम्भव नहीं थी, वह त्राटक के द्वारा सहज रूप से वहन होती रही है। जो दूरस्थ वस्तु बीच में विद्यमान बाधाओं के कारण अन्य किसी साधन के द्वारा नहीं देखी जा सकी, वह त्राटक द्वारा देखी जाती रही है। त्राटक सिद्ध दृष्टि के लिए न तो कोई बहुत बड़ी दूरी बाधक रही है, न कोई दीर्घ काम वस्तु। वह दृष्टि पर्वतों के पार जा सकती है सरलता से। वह दृष्टि पाताल को भेद सकती है। उस दृष्टि के द्वारा सूर्य, चन्द्रमा आदि की गति रोकी जा सकती है और उन्हें आकाश से नीचे भी गिराया जा सकता है।

महाराज सगर के साठ हजार पुत्रों के भस्म होने की घटना लोक प्रसिद्ध हैं। महाराज सगर अश्वमेध यज्ञ करना चाहते थे, उन्होंने दिग्विजय के लिए यज्ञ का अश्व छोड़ा। उसकी रक्षा के लिये उनके साठ हजार पुत्र चले। साथ ही असंख्य सेना भी थी।

देवराज इन्द्र तो ईर्ष्यालु थे ही, वे सगर के वैभव को न देख सके। इसलिए यज्ञ के उस घोड़े को ले जाकर उन्होंने महर्षि कपिल के आश्रम

में बाँध दिया। किन्तु कपिल को इसकी कोई जानकारी नहीं थी। वे यथावत अपनी समाधि में लीन रहे।

सगर के साठ हजार पुत्र और उनकी सेना के लोग अनेक राज्यों को जीतते और उनसे भेंट लेते हुए बढ़े जा रहे थे। तभी उन्हें ज्ञात हुआ कि यज्ञ का घोड़ा नहीं है। सब चौंक उठे—'कहाँ गया यज्ञ का घोड़ा ?' बड़ी तीव्रता से उसकी खोज होने लगी। वे मार्ग में उसे खोजते हुए आगे बढ़े। अन्त में महर्षि कपिल के आश्रम में घोड़ा बँधा हुआ दिखाई दिया तो वे क्रोधित होगये। सभी एक साथ चिल्ला उठे—'वह रहा घोड़ा। यह ऋषि है या चोर ? देखो, कैसा बगुला भक्त बना हुआ बैठा है ध्यान लगाये हुए ! इसे पकड़ कर मार डालो और घोड़े को ले चलो।'

राज-सेना आगे बढ़ी। शीघ्र ही सब लोग कपिलाश्रम के पास पहुँच गये। 'मारो-मारो' की आवाज चारों ओर सुनाई दे रही थी। उस कोलाहल से महर्षि की समाधि टूट गई।

उसी समय सदल बल साठ हजार राजकुमार आगे बढ़े। कुछ ने नंगी तलवारें ले रखी थी हाथ में, कुछ ने धनुध-बाण सँभाले हुए थे, कुछ भाले आदि लिये हुए थे। सभी का लक्ष्य एक मात्र महर्षि कपिल ही थे। राजमद में अन्धे हुए उन राजकुमारों को यह भी ध्यान नहीं था कि ऋषि-महर्षियों में योग-शक्ति होती है, आत्मबल होता है। वह उसी के द्वारा बड़े-बड़े अद्भुत कार्य करने में समर्थ होते हैं। उनकी समता बड़े-बड़े सम्राट भी नहीं कर सकते। देवता, राक्षस, यक्ष, किन्नर, नाग आदि की भी सामर्थ्य नहीं जो तपोबल का सामना कर सकें, तब बेचारे मनुष्य की सामर्थ्य तो होगी ही क्या ?

महर्षि कपिल परम योग सिद्ध थे। त्राटक साधना में पूर्णरूप से सफल थे। उनकी दृष्टि में सर्व सामर्थ्य भरी थी। जो चाहते, अपनी दृष्टि

के बल पर ही कर सकते थे। फिर भी उन्हें अपनी शक्ति-सामर्थ्य पर कोई अभिमान नहीं था। परन्तु प्राण-रक्षा कौन नहीं करना चाहता ? महर्षि ने देखे असंख्य आततायी जो विभिन्न शास्त्रों को उठाये हुए उन्हीं की ओर बढ़े चल आरहे थे।

उनका आत्मबल जाग्रत् हुआ और त्राटक शक्ति साकार हो गई। दृष्टि उठा कर देखते ही साठ हजार राजपुत्र,उनके साथ के करोड़ों सैनिक एवं चतुरंगिणी सेना तथा ढेर सारा सामान भस्म हो गया। कुछ भी शेष नहीं रहा उसमें।

भस्म हुए मनुष्यों, वाहनों, युद्ध सामग्रियों के ढेर इस प्रकार लग गये थे, जैसे भस्म के पर्वत खड़े हो गये हों। महर्षि कपिल की त्राटक जन्य क्रोधाग्नि में सभी कुछ भस्म हो चुका था।

सगर ने देखा कि न राजकुमारों का कुछ पता है, न सेना का और न घोड़े का ही, तो उन्होंने अपने दूसरी रानी से उत्पन्न पुत्र अंशुमान से कहा कि 'पुत्र तुम जाकर पता लगाओ उन सब का।'

अंशुमान चल दिये। सर्वत्र खोज करते-करते कपिलाश्रम पर पहुँचे तो उन्हें यज्ञ का घोड़ा बँधा हुआ दिखाई दिया। स्थान-स्थान पर भस्म के ढेर लगे देख कर उन्हें शंका हुई और वे महर्षि के चरणों में मस्तक झुकाकर बैठ गये। महर्षि ने उन्हें राजपुत्रादि के भस्म होने की पूरी बात बता दी और घोड़ा ले जाने का आदेश दिया। अंशुमान ने अपने भाइयों की मुक्ति का उपाय पूछा तो महर्षि बोले—'राजकुमार ! इनका उद्धार तो गंगा ही कर सकती है, उन्हें भूतल पर लाने का उपाय करो।'

घोड़ा लेकर अंशुमान चल दिये और महाराज के पास जाकर सब वृत्तान्त सुना दिया। महाराज ने दुःख पूर्वक अश्वमेघ यज्ञ को पूर्ण किया अंशुमान ने गंगा को पृथिवी पर लानेके लिए तपस्या की किन्तु सफलता

म मिली। उनके बाद उनके पुत्र दिलीप ने भी गंगा को प्रसन्न करने के लिए घोर तक किया, किन्तु वे भी सफल न हुए।

महाराज दिलीप के पुत्र भगीरथ हुए। उन्होंने गंगा को भूतल पर लाने के लिए उनसे भी अधिक कठिन तप-साधन किया। उन पर माता गंगा प्रसन्न हुई और निर्देश दिया—'भगीरथ ! मैं प्रसन्न हूँ। भूतल पर आने के लिए तो तैयार हूं, किन्तु मेरी धार अत्यन्त वेग वाली है। उसे मध्य में ही संयमित करने के लिए कुछ आधार अवश्य चाहिए। यदि भगवान् शिव मुझे रोकने के लिए तैयार हो जांय तो सा कार्य बन सकता है।'

भगीरथ ने शिवजी की उपासना कर उन्हें प्रसन्न किया, तब वे बोले 'वत्स ! मैं गंगा को अपने जटा-जूट में रोकने का प्रयत्न करूँगा, तुम आह्वान करो उसका।'

शिवजी द्वारा गंगा का संयमन

भगीरथ ने पुनः गंगा से प्रार्थना की—'माता ! आशुतोष भगवान् तैयार हो गये हैं, अब आप अवतरण की तैयारी करें।

शिवजी अपनी जटाओं को खोलकर खड़े हो गए मध्य आकाश में। गंगा बड़ी तेजी से चल पड़ीं। शिवजी ने ऊपर को देखा तो तुरन्त ही गंगा का वेग संयमित हो गया। उनकी त्राटक दृष्टि ने गंगा के वेग को वहीं बहुत कुछ कम कर दिया। अब वह न्यून वेग से उनकी जटाओं में समाने लग गई। जटाओं का आश्रय पाकर गंगा का वेग और भी घट गया। पृथिवी पर महाराज भगीरथ अपने रथ पर तैयार थे ही। गंगा के आते ही आगे-आगे चल पड़े। पीछे-पीछे चलती हुई गंगा ने कपिलाश्रम में पहुँच कर भस्म हुए राजपुत्रों तथा उनके सैनिकादि का उद्धार कर दिया।

शिव द्वारा काम-दहन

भगवान् शंकर से सम्बन्धित यह वृत्तान्त भी बहुत प्रसिद्ध एवं महत्वपूर्ण है। शिवजी को प्राणप्रिया सती ने दक्ष-यज्ञ में अपने प्राणों की आहुति दे डाली और पुनः हिमाचल के घर में पार्वती नाम से जन्म लिया। हिमाचल उस अत्यन्त सुन्दरी और कोमलांगी कन्या को पाकर धन्य हो गये।

एक दिन देवर्षि नारदजी उनके घर पर पधारे और कन्या को देख कर बोले—'पर्वतराज ! तुम्हारी कन्या अत्यन्त शुभ लक्षणा है। समस्त ऋद्धि-सिद्धियाँ इसकी अनुगामिनी रहेगी सदा ही। किन्तु एक ही दोष है इसकी रेखाओं में।'

दोष की बात सुन कर हिमाचल और उनकी पत्नी दोनों ही चौंक पड़े और विनय पूर्वक उसके विषय में पूछने लगे। देवर्षि ने कहा—'इसका पति कोई योगी पुरुष होगा। वह भंगप्रिय, कुवेश तथा भस्म रमाये रहेगा शरीर पर। कण्ठ और हाथ आदि अंगों में अनेकों नाग ही उसके आभूषण रूप से विद्यमान रहेंगे। कहाँ यह कोमलांगी और कहां वह भंगड़ी-जंगड़ी पुरुष।'

हिमाचल ने उपाय पूछा उस दोष के निवारण का तो वे बोले—'उपाय तो कुछ नहीं है, पति तो ऐसा ही मिलेगा। किन्तु एक उपाय है भी, यह सभी लक्षण शिवजी से मिलते हैं, यदि यह तप के द्वारा उन्हें प्रसन्न करले तो समस्त सौभाग्यों की स्वामिनी बन जाय।'

नारदजी चले गये। मात-पिता चिन्ता में पड़ गये 'कैसे करेगी तपस्या ? अल्प वय, कोमल शरीर, इसके वश की बात नहीं। फिर तपस्या करे भी तो शिवजी का प्रसन्न होना कुछ सरल तो है नहीं। बड़े देवता हैं वे। कोई दरिद्र राजकोष की कामना करने लगे तो कैसे

मिलेगा उसे ? कोई चींटी चन्द्रमा को छूना चाहे तो कैसे सम्भव होगा यह ?

किन्तु पार्वती नहीं मानी। उसने नारदजी के निर्देशानुसार तपस्या करने का निश्चय किया। विवश माता-पिता ने सब व्यवस्था कर दी उसकी। वह अपनी सखियों के साथ वन में चली गई और घोर तपस्या करने लगी।

सती के आत्मदाह कर लेने पर शिवजी संसार से विरक्त होगये थे और उनकी दशा एक उन्मत्त के समान हो गई थी सती के वियोग दुःख से। अब वे पुनः कोई झंझट नहीं पालना चाहते थे, इसलिए अपनी योग-साधना में निमग्न हो गये।

देवता सदैव अपने मतलब की बात सोचते रहे हैं। राक्षसों की शक्ति बढ़ती हुई देख कर उन्हें चिन्ता हुई कि किस प्रकार उन्हें जीता जाय ? यदि शिवजी का कोई पुत्र हो तो वह विजय प्राप्त कर सकता है। किन्तु शिवजी का पुत्र हो कैसे ? वह तो पत्नी-विहीन है।

उन्होने देखाकि पार्वती उन्हें पति रूप में पाने के लिई तपस्या कर रही है, किन्तु शिवजी विरक्त हुए समाधि लगाये बैठे हैं। तब सोचा कि ऐसा क्या उपाय किया जाय, जिससे शिवजी पार्वती पर प्रसन्न हों और उसे स्वीकार कर लें पत्नी रूप में।

बहुत विचार के बाद यह निश्चय हुआ कि उनकी समाधि भंग करने के लिये कामदेव को भेजा जाय। इस निश्चय के अनुसार इन्द्र ने कामदेव को बुलाकर सहायता की माँग की।

कामदेव शिवजी के त्राटक योग की सामर्थ्य भले प्रकार से जानता था। इसलिए उनके सामने जाने में आनाकानी की। किन्तु इन्द्र तथा अन्य देवताओं के अधिक जोर देने पर तैयार होना पड़ा उसे और वह अपने आयुधों और अप्सराओं के साथ चल पड़ा कैलास पर्वत की ओर।

शिवजी समाधि लगाये बैठे थे, कामदेव उनकी समाधि भङ्ग करने के उद्देश्य से ही गया था। सर्व प्रथम उसने मदोत्पादक वसन्त ऋतु को प्रकट किया। अनेक प्रकार के पुष्प-पल्लवों से लद कर वृक्ष सुगन्ध छोड़ने लगे। मीठे फल लद गये थे उन पर। सुखद, शीतल, मन्द हवा चल पड़ी वातावरण को अनुकूल बनाने के लिए।

अप्सराओं का नृत्य गान आरम्भ हो गया। दिव्य स्वर और झंकारें सुनाई देने लगीं। कामदेव अपने पंच बाणों को धनुष पर चढ़ा कर एक सघन वृक्ष की ओट में छिपकर खड़ा होगया। उसने जब सब कुछ अनुकूल देखा तब अपने बाणों को छोड़ा।

कामदेव के बाण अमोघ थे। कितना ही विरक्त, योगी, संन्यासी, निर्मोही क्यों न हो, उन बाणों के प्रभाव से अछूता नही बच सकता था। ब्रह्मा, विष्णु आदि सभी उसका लोहा मान चुके थे। शिवजी का मन भी उनके लगते ही व्यथित हो गया।

उनकी समाधि टूट गई। क्या है? यह देखने के लिये उन्होंने दृष्टि उठाई तो सामने देखा—कामदेव खड़ा है। शिवजी महायोगी तो हैं ही, त्राटक दृष्टि से देखा उन्होंने कामदेव को। फिर क्या था? उसके देखते ही भस्म हो गया कामदेव। अप्सराएं भी उसकी यह दशा देख कर डर के कारण भाग गई, कहीं उनकी दशा भी वैसी ही न हो जाय।

अब वहाँ वसन्त ऋतु भी न रही। वृक्ष फल, फूल, पल्लव रहित हो गये। शीतल हवा का पता नही चलता था। जो कुछ बनावटी था उस सब को दूर करके असली वातावरण उपस्थित कर दिया था त्राटक योग की सामर्थ्य ने।

प्रसङ्गवश आगे के वृत्तान्त पर संक्षिप्त रूप से प्रकाश डालना ही पर्याप्त है। कामदेव के भस्म होने के उपरान्त देवताओं ने शिवजी से

प्रार्थना की कि वे पार्वती से विवाह कर लेने की कृपा करें। शिवजी जहाँ परम योग-साधक थे, वहाँ उदार चेता भी थे। उन्होंने देवताओं की बात स्वीकार कर ली। बोले—'देवगण ! आप लोग जो चाहते हैं, वही करूंगा।'

और तब शिवजी का विवाह हो गया। हिमाचलनंदिनी पार्वती के साथ, जिससे सभी की मनोकामना पूरी हो गई।

नहुष का इन्द्र पद से पतन

महर्षि अगस्त्य की महिमा प्रसिद्ध है। इन्होंने अपनी त्राटक शक्ति के बल पर समुद्र का समस्त पानी पी लिया था तथा इन्हीं ने एक बार विन्ध्य पर्वत का अभिमान नष्ट किया था। इन्हीं महर्षि ने इन्द्र पर प्राप्त नहुष को श्रीहीन और स्वर्ग से भ्रष्ट कर दिया था।

एक बार की बात है कि राजा नहुष ने अनेकानेक महायज्ञ तथा पुण्य दानादि कर्मों के द्वारा इन्द्रपद का अधिकार प्राप्त कर लिया और स्वर्ग में पहुँच कर वहाँ का राज्य-शासन सँभाल लिया।

नहुष इतना अधिक मदहोश होगया था कि इन्द्राणी शचि पर भी अधिकार करना चाहता था। इन्द्राणी जैसे-तैसे अपने सतीत्व की रक्षा करती रही। किन्तु वह मदोन्मत्त दुष्ट जब किसी प्रकार न माना तो उसने एक शर्त रखी—'जगत्पते ! यदि तुम मुझे चाहते ही हो तो मैं आपका वाहन पूर्व इन्द्र से भिन्न और विलक्षण देखना चाहती हूँ, अतः आप ऐसा यत्न कीजिये कि महाभाग सप्तर्षि एकत्र होकर आपकी शिविका का वहन करें और तब आप मेरे पास आयें। बस यही मेरी कामना है, आप इसे पूर्ण करने में समर्थ भी हैं, क्योंकि आपकी आज्ञा को कोई टाल नहीं सकता।'

नहुष ने प्रसन्न होते हुए कहा—'यह वाहन तो अपूर्व है, अब अवश्य ही सप्तर्षि और ब्रह्मर्षिगण मेरी पालकी को ढोएँगे।' यह कह कर नहुष ने बलपूर्वक उन सभी महर्षियों को अपनी पालकी ढोने के लिए विवश किया। वे समस्त महर्षिगण उसका बोझ ढोते-ढोते परिश्रम से अत्यन्त पीड़ित होगये।

शिविका ढोते हुए ऋषियों ने उससे पूछा—'देवेन्द्र! गौओं के प्रोक्षण के विषय में वेद-विहित मन्त्रों का आप प्रामाणिक समझते हैं या अप्रमाणिक ?' नहुष उस समय आज्ञनावृत्त हो रहा था, उस अविवेकी ने कहा—'यह वेद मन्त्र प्रमाण नहीं हो सकते।'

इस पर महर्षियों में और नहुष में विवाद चिड़ गया। नहुष का अहंकार कहता था कि मैं सर्वविजयी, त्रैलोक्याधिपति तथा स्वर्गलोक का भी शासक हूँ। देवता, दैत्य, यक्ष, नाग, किन्नर, मनुष्यादि सभी मेरे अधीन हैं, तब इन ऋषियों को, जो मेरे ही राज्य शासन में रह कर जीविका प्राप्त करते है, मुझसे तर्क करने का कोई अधिकार नहीं है।

महर्षिगण भी अपनी मान्यता पर अड़े थे, वे वेद मन्त्रों को प्रमाण-भूत मानते थे। उनकी हठ देख कर नहुष अत्यन्त कुपित हो गया और उसने महर्षि अगस्त्य के मस्तक पर अपने पाँव से प्रहार कर डाला। फिर क्या था ? उसका समस्त तेज नष्ट हो गया। और वे श्रीहीन हो गया। उसी समय महर्षि अगस्त्य ने भी क्रोध में भर कर उसकी ओर देखते हुए कहा—'तू निर्दोष वेदमत को अप्रामाणिक मानता है, यह कितना बड़ा अज्ञान है तेरा ? इस पर भी तूने मेरे सिर पर लात मारी है और दुर्धर्ष तेजस्वी महर्षियों से शिविका ढुलवा रहा है। अपने इन घोर पापों के फल स्वरूप तू तुरन्त ही स्वर्ग से भ्रष्ट होकर धरती पर जा गिर।'

इस प्रकार महर्षि अगस्त्य के नजर भर देखने और शाप देने से अभिमानी नहुष स्वर्ग से भ्रष्ट हो गया। महर्षि ने यह भी कहा था कि 'तू दश हजार वर्ष तक सर्प योनि में रहेगा' इसलिए उसे सर्प की ही योनि प्राप्त हुई।

अगस्त्य मुनि का विन्ध्याचल को लघु बनाना--

एक समय की बात है—देवर्षि नारद विन्ध्याचल पहुँचे। वहाँ पर्वत राज विन्ध्या से उनका अत्यन्त आदर-सत्कार करते हुए कुछ गर्वित वचन कह दिये। इससे नारदजी ने सोचा कि विन्ध्याचल का गर्व दूर होना आवश्यक है। अन्यथा प्राणी गर्व के वशीभूत होकर ही न जानें कितने अनर्थ कर बैठते हैं।

ऐसा निश्चय कर नारदजी ने वहीं एक ठण्डी श्वास भरी। जब विन्ध्याचल ने उसका कारण पूछा तो देवर्षि बोले—'नगराज ! पर्वत श्रेष्ठ मेरु तुम्हारे अपमान में तत्पर है। यही देख कर मुझे कुछ खेद हुआ और मैं ठण्डी श्वास ले बैठा। अब तुम यत्न पूर्वक इसका उचित उपाय करना।'

नारदजी चले गये। इधर विन्ध्यगिरि का मन अशान्त हो गया। उसने सोचा—मैंरुगिरि से किस बात में कम हूँ जो वह मेरा अपमान करता है। मैं अभी उसे दिखाये देता हूँ कि वह मेरी तुलना कदापि नही कर सकता।'

और ऐसा विचार करते हुए विन्ध्यगिरि ने अपनी ऊँचाई बढ़ानी आरम्भ की। धीरे-धीरे वह इतना उठ गया कि उसकी ऊपरी शिखा आकाश से जा लगी और सूर्य का मार्ग रुक गया। जब मार्ग ही नहीं, तब सूर्य का चलना कैसे सम्भव ? आधे पल में दो हजार दो सौ योजन

चलने वाले सूर्य इस दैववशात प्राप्त बाधा के कारण वहीं खड़े रह गये ।

सूर्य के खड़े होने से संसार व्याकुल हो गया । प्राणियों में त्राहि-त्राहि मच गई । पूर्व और उत्तर दिशा के जीव उनकी स्थिर किरणों के घोर ताप से जलने लगे । दक्षिण और पश्चिम दिशाओं में रात्रि जैसा अन्धकार होने के कारण समस्त कार्य रुक गये । लोग जान ही न पाये कि दिन हुआ नहीं है, ईस कारण घरों में विश्राम करने लगे । यज्ञादि कर्म रुकने से देवगण भी परेशान थे ।

जब कोई युक्ति न सूझी तो सभी देवता ब्रह्माजी की शरण में गये । कमलासन ब्रह्माजी ने उनके आने का कारण पूछा तो देवताओं ने बताया—'ब्रह्मन् ! मेरुगिरि से स्पर्द्धा के उद्देश्य से विन्ध्यगिरि उठ कर आकाश से जा लगा है और उसने सूर्य का मार्ग रोक लिया है, इस कारण एक ओर प्राणि-समूह जल रहा है तो दूसरी ओर अन्धकार छाया हुआ है । कृपया इस स्थिति से उबारने के लिये उपाय कीजिये ।'

ब्रह्माजी ने कुछ देर विचार करके कहा—'देवगण ! तुम सब लोग काशी को प्रस्थान करो । वहाँ महर्षि अगस्त्य भगवन् शंकर की उपासना-साधना में लगे हैं । उनसे निवेदन करो, वे तुम्हारे कष्ट दूर कर देंगे ।'

देवगण काशी पहुँचें । वहाँ उन्होंने महर्षि अगस्त्य से सब कष्ट-कथा कही ओर उनसे साथ चलने का निवेदन किया । महर्षि ने भगवान् महाकाल से अनुमति प्राप्त की और विन्ध्याचल के समीप पहुँचे । वह पर्वतराज आकाश तक ऊँचा उठ कर सूर्य का मार्ग रोके खड़ा था । महर्षि के दृष्टिपात करते ही वह काँप उठा और तुन्रत ही अपना छोटा रूप धारण करके महर्षि से बोला—'मुनिनाथ ! आज्ञा कीजिये, आपको क्या सेवा करूँ ?'

महर्षि उसे देखते ही जा रहे थी, पर्वतराज उनकी दृष्टि से घटता ही चला जा रहा था । उसने सोचा—'इस प्रकार तो मेरा अस्तित्व ही

समाप्त हो जायगा। इसलिये महर्षि से क्षमा-याचना कर उन्हें प्रसन्न ही क्यों न कर लूँ ?'

और तब विन्ध्यगिरि ने महर्षि अगस्त्य की बहुत अनुनय-विनय की और विश्वास दिलाया कि वे जो कुछ आज्ञा देंगे उसका अक्षरशः पालन करेगा।

महर्षि सन्तुष्ट हुए। उन्होंने कहा—'पर्वत श्रेष्ठ ! तुम साधु पुरुष तथा बुद्धिमान हो और मुझे भी भले प्रकार जानते हो। मैं अभी इधर जा रहा हूँ और जब तक यहाँ वापिस न लौटूँ तब तक तुम्हें इसी अत्यन्त लघुरूप में स्थित रहना है। देखो, मेरे आदेश का उल्लंघन न हो पाये किसी भी प्रकार।'

यह कह कर महर्षि ने पुनः उस पर एक तीव्र दृष्टि फेंकी। पर्वत-राज अपनी कुशल मनाता हुआ और भी झुक गया उनके आगे। कहीं महर्षि शाप न दे बैठें, इस भय से विनय युक्त वाणी में बोला—'महर्षि ! मैं तो आपका सदा से ही सेवक रहा हूँ। आपके आदेश का पालन न करूँ, मुझसे यह कभी सम्भव नहीं।'

महर्षि समझ गये कि अब यह ऐसी भूल नहीं करेगा। इसलिये अपना सन्तोष व्यक्त करके एक ओर चले गये। यह देखकर पर्वतराज ने भी चैन की सांस ली कि महर्षि ने उसे शाप नहीं दिया और सन्तुष्ट होकर चले गये।

महर्षि च्यवन की दृष्टि से राजा रानी के घाव मिटे—

प्राचीन काल की बात है—एक अत्यन्त प्रतापी और धर्मज्ञ राजा हुए थे, जिनका नाम कुशिक था। एक बार महर्षि च्यवन ने उनके पास

जाकर कहा—'राजन् ! मुझे कुछ दिन आपके साथ रहना है। रानी को भी उपस्थित रहना होगा।'

राजा ने स्वीकार कर लिया। ऋषि ने सायंकालीन भोजन के पश्चात् कहा—'राजन् ! मेरे सोने का समय हो गया है। जब मैं सोजाऊँ तब मुझे जगाना मत और तुम दोनों रात भर जागते रह कर मेरे चरण दावते रहना।'

दोनों ने वैसा ही किया। प्रातःकाल होने पर भी महर्षि को नहीं जगाया और भोजन पानी की चिन्ता छोड़कर उन्हीं की सेवा में लगे रहे। महर्षि इक्कीस दिनों तक निरन्तर सोते रहे और बाईसवें दिन जाग कर शयनगृह से चल दिये। भूखे-प्यासे, निद्रा से व्याकुल राजा-रानी उनके पीछे-पीछे चले, तभी महर्षि अन्तर्धान हो गये। इससे राजा बहुत दुःखित हुए, किन्तु रानी ने उन्हें समझा-बुझा कर शान्त किया।

फिर दोनों विश्रामगृह में गये तो यह देखकर आश्चर्य चकित हो गये कि महर्षि उसी शय्यां पर पूर्ववत् सो रहे हैं। अब वे दोनों पुनः उनके चरण दवाने लगे।

बहुत दिन बीत गये, तब ऋषि ने शय्या से उठ कर कहा—'मैं स्नान करूँगा, इसलिये मेरे मालिश कर दो। राजा-रानी ने वैसा ही किया और ऋषि को स्नानगृह में लेजाकर स्नान कराया।

स्नान के पश्चात् महर्षि च्यवन सिंहासन पर आ बैठे उनकी आज्ञा पाकर महाराज ने भोजन की सामग्री उपस्थित की। तब महर्षि ने उस समस्त सामग्री के साथ शय्या, वस्त्र, आनन आदि अनेक बहुमूल्य वस्तुएँ रख कर आग लगा दी, किन्तु राजा-रानी शान्त भाव से बैठे हुए यह सब देखते रहे।

पचासवें दिन महर्षि ने एक नया आदेश दिया—'राजन् ! मुझे रथ में बैठा कर आप स्वयं रानी के सहित रथ को खींचिये।' राजा ने

पूछा—'ब्रह्मन् ! क्रीड़ा-रथ लाऊँ या सांग्रामिक ?' महर्षि बोले—'सांग्रामिक रथ ही ले आओ।'

यह सुन कर राजा ने सांग्रामिक रथ उपस्थित किया और स्वयं दाईं ओर लग कर रानी को बाँयी ओर लगाया। फिर, महर्षि हाथ में एक नुकीला चाबुक लेकर रथ पर सवार होते हुए बोले—'राजन् ! मैं चाहता हूँ कि मार्ग में जो ब्राह्मणादि मिलें, उन्हें इच्छित धन-रत्नादि का दान करूँ। तुम इसकी व्यवस्था करके रथ को धीरे-धीरे नगर में होकर लेचलो।'

राजा ने यह व्यवस्था भी कर दी और फिर महर्षि के कहने के अनुसार धीरे धीरे रथ चलाने लगे। उस समय महर्षि ने राजा और रानी की गर्दन और पीठ पर नुकीले चाबुक से बार-बार प्रहार कर घाव कर दिये। यह देख कर नागरिक गया भी चिल्लाने लगे। किन्तु राजा-रानी भूख, प्यास, निद्रा आदि से व्याकुल तथा मार सहते हुए भी शान्त भाव से रथ खींचते रहे।

महर्षि ने धन कुवेर के समान पर्याप्त रत्न, मणि, स्वर्ण आदि दान कर दिया। इससे राज-कोष खाली होने लगा। महर्षि बार-बार धन की माँग करते और महाराज मँगा कर देते रहे।

महर्षि के द्वारा त्रिविध प्रकार की दी गई यातनाओं को सहते हुए राजा-रानी विचलित नहीं हुए। यह देखकर महर्षि ने रथ रोकने की आज्ञा दी और रथ से उतर कर राजा-रानी दोनों के ही अंगों पर दृष्टि-पात करते हुए बोले—'राजन् ! तुम दोनों का अविचल धैर्य और धर्म-बुद्धि देखकर मैं बहुत प्रसन्न हूँ। अब तुम्हारे परम भाग्योदय का समय आचुका है। देखो, मेरे देखने से तुम्हारे अंगों के गाव मिटते जा रहे हैं।'

राजा-रानी के सभी घाव क्रमशः मिट गये और थकान दूर होकर वे पूर्ण स्वस्थ हो गये उस समय उन्हें भूख, प्यास, निद्रा किसी का भी

अनुभव नहीं हो रहा था यह देखकर राजा-रानी दोनों ही आश्चर्य-चकित हो रहे थे ।

महर्षि बोले—'राजन् ! मैं अब इसी गंगातट पर रह कर साधना करूँगा । तुम कल यहाँ आना ।'

राजा-रानी प्रणाम करके अपने नगर में आये तो उन्हें पता चला कि राज-कोष पहिले से भी अधिक भर गया है । उनके स्वयं के शरीर हृष्ट-पुष्ट, अत्यन्त सुन्दर तथा तरुणों जैसे हो गये हैं । इससे उनकी प्रसन्नता का पारावार न रहा । दूसरे दिन महर्षि की सेवा में पहुँचे तब उन्होंने कहा—'राजन् ! एक बार ब्रह्माजी की सभा में सुना था कि आपके वंश से मेरे वंश में क्षत्रिय धर्म चलेगा तथा आपके पौत्र को ब्राह्मणत्व की प्राप्ति होगी । मैं ऐसा नहीं होने देना चाहता था, इसलिये तुम्हारे कुपति होने पर शाप देने की यह योजना बनाई थी मैंने । परन्तु तुम अविचल भाव से मेरी सभी यातनाओं को सहन करते रहे, इसलिये शाप के स्थान पर वर देना ही उचित है । अब, तुम जो चाहो वही मुझसे माँग लो ।'

राजा ने कहा—'भगवन् ! मैं यही वर माँगता हूँ कि मेरे वंश में धर्म की दृढ़ता सदैव बनी रहे । किन्तु प्रभो ! यह बताने की कृपा करें कि मेरे वंश में ब्राह्मणत्व आयेगा कैसे ?'

महर्षि ने बताया—'भविष्य में क्षत्रियगण भृगुवंशियों को नष्ट करेंगे, किन्तु भृगुकुल की एक गर्भवती स्त्री पर्वत में छिप कर बच जायगी । उससे ऊर्व नामक पुत्र होगा । उसका जो पुत्र ऋचीक होगा वह क्षत्रिय कुल को नष्ट करने के लिये धनुर्वेद सीखेगा । पर, आपके वंश की रक्षा के लिये वह आपके पुत्र गाधि की पुत्री से विवाह करेगा और अपनी पत्नी तथा सास दोनों के लिये पृथक्-पृथक् चरु बनायेगा । किन्तु चरु बदल जाने से गाधि का पुत्र स्वभाव में ब्राह्मण होगा जो धर्मात्मा विश्वामित्र के नाम से प्रसिद्ध होगा ।'

भविय का यह वृत्तान्त कहकर महर्षि तीर्थ यात्रा को चले गये और राजा-रानी अपने नगर में लोट आये।

शुक्राचार्य का दण्ड को भस्मीभूत करना

महाराज इक्ष्वाकु एक प्रसिद्ध सम्राट हुए हैं। उनका पुत्र दण्ड महर्षि शुक्राचार्य का शिष्य था। शुक्राचार्य की अरजा नाम की पुत्री पर उसकी आसक्ति थी। जब महर्षि अपने आश्रम में नहीं थे तब उसने उस कन्या का सतीत्व नष्ट कर डाला। वह कन्या रोती-रोती अपने पिता का स्मरण कर रही थी।

पुत्री का रुदन सुदूरस्थ महर्षि के कान में पड़ा और वे तुरन्त उसके पास पहुँच गये तथा पुत्री से सब समाचार जानकर उन्होंने राजकुमार दण्ड की दिशा में घूरते हुए कहा—'पातकी राजपुत्र! तू मेरी दृष्टि से बच कर नहीं जा सकता। तूने निश्चय ही क्षत्रिय कुल को कलंकित करने वाला कार्य किया है। अरे दुष्ट! विश्वासघाती मैं तुझे अभी भस्म किये देता हूँ।'

कुछ क्षण बाद ही महर्षि ने अपनी कन्या से कहा—'पुत्री! पापाचारी राजकुमार भस्म हो चुका है। अब तू भी अपने पाप से छूटने के लिये तपश्चर्या में लग।' यह सुनकर अरजा तपस्या करने लगी।

जाजलि मुनि का चिड़िया को भस्म करना

प्राचीन काल में जाजलि नामक एक मुनि श्रेष्ठ हुए थे। उन्होंने योगाभ्यास द्वारा अद्वितीय शक्ति सामर्थ्य प्राप्त कर ली थी। त्राटक सिद्धि में वे पूर्ण रूप से सफल थे।

एक दिन मुनि पर एक चिड़िया ने बीट कर दी तो मुनि को क्रोध आ गया। उन्होंने ऊपर की ओर दृष्टिपात किया तो चिड़िया धरती पर गिर कर भस्म हो गई। इससे जाजलि मुनि को अपनी त्राटक सिद्धि पर पूरा भरोसा हो गया।

जाजलि मुनि भिक्षाटन के लिए चले और एक गृहस्थ घर के द्वार पर खड़े होकर भिक्षा माँगने लगे। गृह स्वामिनी ने भीतर से आवाज दी—'अभी आती हूँ।'

किन्तु उसे आने में देर हो गई। मुनि खड़े-खड़े उकता गये और पुनः भिक्षा के लिए आवाज लगाई भीतर से पुनः वही उत्तर मिला—'अभी आती हूँ।'

फिर भी कोई नहीं आया। मुनि को झुंझलाहट हुई। वे बोले—'आती है या चले जाँय ?

गृह स्वामिनी ने भीतर से ही उत्तर दिया—'मैं पतिव्रता स्त्री हूँ। पतिदेव की सेवा में लगी हूँ। जब तक उनके सेवा कार्य से निवृत्त न हो लूँ, कैसे आ सकती हूँ। परन्तु आप निस्पृह ऋषि हैं। आपको क्रोधित नहीं होना चाहिये। मैं कोई चिड़िया तो हूँ नहीं जो आपके देखते ही भस्म हो जाऊँगी।

मुनि का क्रोध उतर गया। उन्हें आश्चर्य भी हुआ कि इसने चिड़िया के भस्म होने की घटना कैसे जान ली तभी गृह स्वामिनी भिक्षा लेकर द्वार पर आई। मुनिवर उसके तेजस्वी मुख मण्डल को देख कर समझ गये कि यह पति-परायणा होने के कारण तपस्या के बल में बढ़ी-चढ़ी है। उन्हें याद आ गया कि पतिव्रता महिलाएँ भी दृष्टि पात मात्र से चाहे जिसे भस्म करने की शक्ति रखती हैं।

अहिल्या का पाषाण हो जाना

अहिल्या अत्यन्त रूपवती थी. देवता, दैत्य, मनुष्य सभी उसकी

कामना करते थे, किन्तु उसके प्रतापी पति महर्षि गौतम के भय से उसकी ओर आँख उठाने में भी घबराते थे। सभी जानते थे कि महर्षि गौतत परम योग-साधक हैं। उनकी वाणी में प्रबलता और नेत्रों में क्रियाशक्ति थी।

किन्तु देवराज इन्द्र अहिल्या का लोभ सँवरण नहीं कर सके। महर्षि से भयभीत होते हुए भी उन्होंने अपनी कामना-पूर्ति का पूर्ण निश्चय कर लिया। एक किन महर्षि की अनुपस्थिति वे उन्ही का रूप बना कर गौतम के आश्रम में जा पहुँचे। अहिल्या अपना पति समझ कर किसी प्रकार का विरोध नहीं कर सकी।

इन्द्र के चले जाने पर महर्षि अपने आश्रम में लौटे तो किसी प्रकार उन्हें कुछ सन्देह हो गया। जब पूछने पर पत्नी कुछ न बता सकी तब उन्होंने ध्यान लगा कर सब रहस्य जान लिया।

अब तो महर्षि की आंखें लाल होगई और वे क्रोध से काँप उठे। अहिल्या उनके उस रूप को देख कर भयभीत हो गई, किन्तु इन्द्र ? इन्द्र तो वहाँ थे ही नहीं।

महर्षि ने कम्पित स्वर में कहा—'दुष्ट देवराज! तूने बड़ा अनर्थ किया है, इस पाप के कारण तेरे शरीर में अनेकों छिद्र हो जायेंगे और तू भारी कष्ट पायेगा।'

इन्द्र को शाप देकर भी उनका क्रोध शान्त न हुआ तो उन्होंने अहिल्या को क्रोध पूर्वक देखते हुए कहा—'तू पाषाण के समान मौन खड़ी है अपना पाप छिपाये हुए, इसलिए तुरन्त ही पाषाण हो जायगी।'

और महर्षि के क्रोध दृष्टि द्वारा देखने भर से अहिल्या का समस्त शरीर पत्थर का हो गया। वह जिस अवस्था में थी, वैसी की वैसी ही रह गई। महर्षि की त्राटक शक्ति ने उसे गतिहीन बना दिया।

महर्षि को अब कुछ शान्ति हुई, किन्तु उतनी शान्ति नहीं जितनी पहिले रहती थी। फिर भी वे अपने को सँभाल कर योग-साधना करने में ही लगे रहने लगे।

राम द्वारा अहिल्या को पुनः गति प्रदान करना

विश्वामित्र की यज्ञ-रक्षा के लिए राम को माँगा गया था। लक्ष्मण भी उनके साथ चल दिये। राक्षसों को भगा कर और मार कर उन्होंने ऋषि के यज्ञ की रक्षा की थी। फिर वहीं से वे ऋषि के साथ ही सीता-स्वयंवर देखने के लिये जनकपुर गये।

मार्ग में गौतम-पत्नी अहिल्या पाषाण-प्रतिमा बनी हुई विद्यमान थी। राम के पूछने पर विश्वामित्र ने उसका पूर्व वृत्तान्त बताकर कहा—'आप सर्व समर्थ हैं, इस महिला को जीवनदान दीजिये, आपकी ही प्रतिक्षा में यहाँ बैठी है यह।

राम ने उसकी ओर देखा प्रसन्न और शान्त मुद्रा में तो उसी समय लगा जैसे पाषाण मूर्ति में स्पन्दन होने लगा हो। महर्षि के कहने से उन्होंने उसके शरीर से अपना चरण स्पर्श भी करा दिया। तभी अहिल्या उठ खड़ीं हुई और राम की स्तु करने लगी। किन्तु उसे अब भी यह शंका थी कि महर्षि अपनायेंगे अथवा नहीं? राम के इन शब्दों से उसकी शंका दूर हो गई—'गौतम-पत्नि! तुम मेरी दृष्टि मात्र से पवित्र हो गई हो और पूर्व रूप की भी प्राप्ति होगई है तुम्हें। अब महर्षि तुम्हें सहर्ष ग्रहण कर लेंगे।'

गौतमी चली गई। वह पाषाण प्रतिमा से पुनः मानवी होगई। महर्षि की त्राटक सिद्धि ने उसे पाषाण बना दिया था तो राम की त्राटक सिद्धि ने पूर्व रूप प्रदान कर दिया था उसे।

जनकपुर के प्रजाजन भी मुग्ध होगये

राम जैसे ही जनकपुर में प्रविष्ट हुए, एक ऋषि के साथ दोनों राजकुमारों को देख कर लोगों को बड़ा कौतूहल हुआ। वे उन्हें देखने के लिए आने लगे।

किन्तु उन देखने वालों में से राम जिस पर भी अपनी दृष्टि डालते वहीं मोहित और स्तब्ध हो जाता। लोग सभी कुछ भूल कर उनके पीछे-पीछे चलने लगते। स्त्रियाँ भी उनकी दृष्टि शक्ति से स्तम्भित हो जातीं। राम जब पुष्पवाटिका में पूजा के लिए फूल लेने गये, तभी वहाँ जानकी भी गौरी पूजन के लिए आई थी। राम ने जानकी की ओर भर नजर देखा तभी उसने उन्हें मन ही मन वरण कर लिया।

राम द्वारा हनुमान का आकर्षण

श्री राम को परब्रह्म परमात्मा मानते हैं भक्तगण, किन्तु कुछ व्यक्ति जो परमात्मा को निराकार मानते हैं और कहते हैं कि वह कभी अवतार नहीं लेता, कभी साकार नहीं होता, वे श्रीराम को महापुरुष तो मानते ही हैं। वस्तुतः राम मर्यादा पुरुषोत्तम हैं ही, उन्होंने अपने समस्त जीवन में मर्यादाओं का अवश्य पालन किया है।

राम में समस्त दिव्य शक्तियाँ विद्यमान थीं। उनके बल का मुकाबला करना भी किसी के लिए सम्भव नहीं था। महाबली रावण भी सीता का हरण तभी करके लाया जब उसने राम को स्वर्ण मृग के बहाने पंचवटी से दूर हटा दिया था।

भगवान् राम भी परम योगाभ्यासी थे। उनकी त्राटक योग सिद्धि इतनी प्रबल थी कि जो भी उनके सामने आता, वही उनका अनुगामी बन जाता। प्रजाजनों का तो यह हाल था कि जब वे अयोध्या छोड़ कर

चले तब लोग भी अपने-अपने घरों को छोड़ कर उनके साथ लग गये। यह उनमें निहित उसी आकर्षण शक्ति का प्रभाव था जो त्राटक सिद्धि द्वारा ही प्राप्त हुई होगी।

उनके रूप को देख कर रावण की बहिन शूर्पणखा मोहित हो गई थी वह उनके नयनों के आकर्षण में खिंच कर चली आई थी वहाँ। यद्यपि वह राक्षसी भी अत्यन्त बलशालिनी थी, किन्तु राम की दृष्टि शक्ति के समक्ष बलहीन हो गई और चुपचाप अपनी नाक कटा बैठी।

सीता हरण के पश्चात् जब उनकी खोज करते हुए राम अपने अनुज लक्ष्मण के साथ ऋष्यमूक पर्वत के निकट पहुँचे तब सुग्रीव ने उन्हें आते हुए देखा। सुग्रीव अपने बड़े भाई बाली के भय के कारण इस पर्वत पर रहता था। उसे पता था कि बाली को शाप लगा है, इसलिए वह यहाँ नहीं आयेगा।

राम-लक्ष्मण को अपनी ओर आते हुए देख कर सुग्रीव को शंका हुई कि कहीं यह बाली के गुप्तचर अथवा अनुचर न हों, जो मेरे लिए किसी प्रकार का खतरा उपस्थित हो जाय। इसलिए उसने अपने सचिव हनुमानजी बुला कर कहा—'पवनकुमार ! देखो, वे दो मनुष्य इधर आ रहे हैं, कहीं यह बाली द्वारा न भेजे गये हों। यदि ऐसा हुआ तो कुछ उपद्रव खड़ा कर सकते हैं। इसलिए, तुम इनका पता लगाओ।'

हनुमान जी को सुग्रीव की बात में कुछ तथ्य लगा। उन्होंने सोचा कि 'पता लगाने के लिए रूप बदल कर जाना अधिक हितकर रहेगा, नहीं तो सम्भव है काम बिगड़ जाए। यह भी सम्भव है कि वे लोग असली रूप में देखकर आक्रमण ही कर बैठें और व्यर्थ ही युद्ध की नौबत आ जाय।'

उन्होंने ब्राह्मण का रूप बनाया और उछलते-कूदते चल दिए पता लगाने को। इधर राम-लक्ष्मण भी उस स्थान पर पहुँच चुके थे, जहाँ से पर्वत की चढ़ाई आरम्भ होने वाली थी।

राम ने देखा—सामने से कोई आ रहा है ब्राह्मण वेश में उन्हें भी सन्देह हुआ कि इस भयंकर वन-मार्ग में कोई ब्राह्मण कहाँ से आया ? यहाँ तो सिंहादि हिंस्र पशु तथा रीछ-वानर आदि ही मिल सकते हैं,अतः यह ब्राह्मण नहीं, कोई छद्मवेशधारी ही हो सकता है।

उनके भर दृष्टि देखते ही हनुमान उधर आकर्षित होगये, उनकी समस्त शंका न जानें कहाँ तिरोहित हो गई। उसी आकर्षण में पूछा हनुमान ने—'अरे, आप दोनों तो बड़े सुन्दर, कोमल शरीर और किशोर वय वाले हैं। यह भयङ्कर वनस्थली और दुर्गम पर्वत मार्ग आपके योग्य नहीं हैं, फिर भी आप निःशंक हुए यहाँ विचरण कर रहे हैं। यह तो बताइये कि आप हैं कौन और किधर जा रहे हैं।

हनुमान को उनके मानव होने में भी संदेह हुआ, इसलिए पूछ बैठे 'क्या आप ब्रह्मा, विष्णु, शिव या इन्द्र में से कोई है, अथवा वरुण, कुबेर या अन्य कोई। वस्तुतः आपका दर्शन करके मैं अपने को धन्य हुआ अनुभव करता हूँ।'

राम ने अपना परिचय दिया, तब तो हनुमान और भी भावुक हो उठे। वस्तुतः वे उनकी त्राटक सिद्ध दृष्टि में इतने बँध गये कि उनके ही हो गये। अब हनुमान अपने को राम का दास या सेवक होने में ही कल्याण देखने लगे। वे उन्हें कन्धे पर चढ़ा कर ऋष्यमूक पर्वत पर ले गये सुग्रीव के पास और तब सुग्रीव भी उनकी एक ही दृष्टि में मित्र बन गये।

राम द्वारा जयंत की त्राटक शक्ति क्षीण हुई

सीता-हरण से भी पहिले की एक घटना है—जयंत की। वह इन्द्र का पुत्र अपने त्राटक योग के बल में इतना अधिक गर्वित हो गया कि सीताजी को ही तंग करने लगा। वह समझता था कि उसका कोई कुछ

नहीं बिगाड़ सकता. क्योंकि प्रथम तो वह स्वयं ही शक्तिशाली है, उस पर भी इन्द्र का पुत्र !

वह अपनी दृष्टि शक्ति के बल पर चाहे जिसे मोहित करने में समर्थ था, किन्तु पविव्रता जानकी पर उसका कोई प्रभाव नहीं चल सकता था। इसलिए रुष्ट होकर उसने कौए का रूप धारण कर उनके चरण को चोंच मार कर आहत कर दिया। जहाँ उसने चोंच मारी थी, वहाँ तीव्र दर्द के साथ रक्तस्राव होने लगा था।

राम को यह देख कर जयंत की धृष्टता पर क्रोध आ गया। उन्होंने अपने धनुष पर एक तृण चढ़ा कर उसकी ओर छोड़ दिया। जयन्त भागा किन्तु वह तृण भी उसके पीछे दौड़ने लगा। बड़ा परेशान हुआ जयन्त। कभी इन्द्र के पास, कभी ब्रह्मा के पास तो कभी शिव के पास घूमता फिरा। सभी से प्राण-रक्षा की प्रार्थना की उसने। किन्तु किसी ने भी शरण नहीं दी उसे। राम-कोप के आगे कौन देखता कि वह जयन्त है, इन्द्र का पुत्र जयन्त।

जब कहीं भी आश्रय न मिला उसे तो सोचा—'राम की शरण में ही क्यों न चलूँ, सम्भव है वे मुझे क्षमा कर दें। लोग जैसे बताते हैं उन्हें, वैसे हुए तो प्राण बचना कठिन नहीं।'

और जयन्त राम की ही शरण में लौट पड़ा। उसने कहा— 'मुझ से भूल होगई प्रभो ! किन्तु आप तो बहुत ही दयालु हैं, मुझ मूर्ख को क्षमा कर दीजिये।'

राम बोले—'जयन्त ! क्षुद्र सिद्धि पाकर जब मनुष्य अहंकारी हो जाता है, तब वह प्राणियों का बड़ा अहित करता है। इसलिए दोषी को दण्ड देना भी आश्वयक है, अन्यथा समाज उच्छंखल हो जायगा। तुम्हारे लिए भी यदि प्राण दण्ड न दिया तो भी कुछ तो देना ही होगा। तुम्हारी आँख में जो शक्ति निहित है, उसमें कमी लाने और उसका सन्तुलन बनाये रखने के उद्देश्य से एक आँख की हानि ही पर्याप्त होगी। उससे

तुम्हें बुद्धि प्राप्त होगी और विवेक जाग्रत होगा। तुम्हारा कल्याण इसी में है कि 'एक आँख फोड़ दी जाय तुम्हारी' और जयन्त की एक आँख फोड़ ही दी गई।'

राक्षसी द्वारा हनुमान का आकर्षण

यह घटना उस समय की है, जब हनुमान जी लंका के लिए समुद्र-पार कर रहे थे। वे नाग माता सुरसा की परीक्षा में उत्तीर्ण होकर आगे बढ़े ही थे कि सिंहिका नाम की एक राक्षसी ने उनकी छाया को पकड़ लिया, जिससे उनकी गति में अवरोध उत्पन्न हो गया। वे सोचने लगे कि 'यह क्या हुआ ? कहीं कोई भी दिखाई नहीं देता, किन्तु लगता है कि कोई जल में खींच रहा है मुझे।

सिंहिका राक्षसी तो थी, किन्तु योग की सिद्धि थी उसके पास। वह जिसकी छाया को देखती उसी को अपनी त्राटक सिद्धि के बल पर खींच लेती। उसने अब तक न जानें कितने ऐसे निरीह प्राणी मार डाले जो उस मार्ग से निकले थे। इस बात को समस्त नभचर जानते थे, इसलिए उन्होंने उधर से निकलना ही छोड़ दिया था कभी कोई भूले भटके आता भी तो तुरन्त गायब हो जाता था।

राक्षसी को हनुमानजी की छाया दिखाई दो तो वह प्रसन्न हो उठी। उसने तुरन्त अपनी त्राटक शक्ति के बल से उस छाया के द्वारा ही हनुमानजी को पकड़ा और नीचे की ओर खींचना आरम्भ किया। आश्चर्य चकित हनुमानजी ने नीचे की ओर दृष्टि डाली तो दिखाई दे गई वह वह राक्षसी। फिर क्या था ? विशाल काय हनुमानजी वेग पूर्वक उस पर कूद पड़े, जिससे दबने के कारण राक्षसी का शरीर पिस कर चूर-चूर हो गया।

उनके इस अद्भुत कार्यको देखकर समस्त आकाशगामी प्राणी निर्भय

हो गए और उनका स्तवन करने लगे । हनुमानजी भी उस राक्षसी को मार कर अपने मार्ग पर पुनः चल पड़े ।

मुचुकुन्द का कालयवन को भस्म करना

यह घटना द्वापर के अन्तिम काल की है, जब श्रीकृष्ण अवतीर्ण हो चुके थे । उन्होंने अपना बाल्यकाल गोकुल और वृन्दावन में काटा और फिर अक्रूर के साथ मथुरा आकर दुष्टराज कंस का वध किया । कंस श्वसुर जरासंध को अपने जमाता के वध का समाचार मिला तो, उसने मथुरा पर आक्रमण कर दिया । बार-बार हार कर भी वह सेना एकत्र करके चला आता । ऐसे में ही उसे पता लगा कि कालयवन भी मथुरा की ओर बढ़ रहा है तो उसका साहस और अधिक बढ़ गया ।

कालयवन की नारद से भेंट हुई । वह युद्ध का मतवाला अपने समान बलवान वीर की खोज में था लड़ने के लिए । नारद ने उसे बताया कि 'तेरे समान बलवान तो संसार भर में कोई भी नहीं है । बस है तो एक कृष्ण ही, जो मथुरा में रहता है । यदि युद्ध करना है तो उसी से कर ।

वह मथुरा की ओर तेजी से बढ़ा । कृष्ण ने यादवों की रक्षा के लिए द्वारिकापुरी का त्वष्टा द्वारा निर्माण कराया और सभी को वहाँ भेज दिया । केवल अपने बड़े भाई बलराम के साथ ही स्वयं ही मथुरा में टिके हुए थे, वहाँ की सुरक्षा व्यवस्था करने को ।

जब उन्हें पता चला कि जरासन्ध और कालयवन दोनों ही अपनी-अपनी विशाल सेनाओं के साथ मथुरा के निकट आ गए हैं, तब वे मथुरा से चल पड़े । उन्होंने बलरामजी को सीधे बढ़ जाने को कह कर आप स्वयं कालयवन के आगे से निकले । उनका उद्देश्य था कि उन्हें

भागते देख कर शत्रुगण उनका पीछा करेंगे और इस प्रकार उन्हें मथुरा से बहुत दूर ले जाया जा सकेगा। उस समय मथुरा की रक्षा का एक उपाय भी यही था।

कालयवन देखा कि एक युवक नंगे पाँव भगा जा रहा है। श्याम वर्ण का शरीर, सिर पर मोर पंख युक्त मुकुट, कमर में पीताम्बर आदि धारण किए हुए हैं। नारद ने जो रूप रंग बताया था, वही है ज्यों की त्यों, अवश्य यही कृष्ण है।

उसने पुकारा—'अरे, तू तो बड़ा वीर है, यदुकुल में उत्पन्न हुआ है, क्षत्रिय होकर भी भागा जा रहा है कायरों के समान, तुझे, लज्जा नहीं आती इस प्रकार भागने में ?'

किन्तु कृष्ण कब सुनने वाले थे उसकी ? उन पर कोई प्रभाव नहीं था उसके कहने को। वे भागने का अभिनय कर रहे थे उस समय। कालयवन भी उन्हें पकड़ने को दौड़ा पीछे-पीछे किन्तु कृष्ण के समान तेजी से न दौड़ सका। कृष्ण थे कि जब देखते वह अधिक पीछे रह गया है, ठहर कर उसकी प्रतीक्षा करते और समीप आने पर फिर तेजी से भागने लगते।

भागता-भागता हाँपने लगा कालयवन, फिर भी अपने को थका हुआ प्रदर्शित नहीं करना चाहता था। कृष्ण आगे जा चुके थे। उसने एक गुफा देखी तो समझा कि इसी में घुसा होगा कृष्ण। भीतर गया तो देखा कि एक व्यक्ति पीताम्बर ओढ़े हुए लेटा है। पीताम्बर वही है जो कृष्ण के पास था। इससे स्पष्ट था कि सोया हुआ व्यक्ति कृष्ण ही होना चाहिए।

कालयवन चीख उठा—'अब थक गया तो यहाँ आकर लेट गया है सोने का बहाना करके। किन्तु मैं तुझे छोड़ने वाला नहीं हूँ। नीति कहती है कि शत्रु हाथ में आजाय तो उसे छोड़ना नहीं चाहिए। इसलिये

मैं तुझे मारूँगा तो अवश्य, किन्तु सोते हुए नहीं। जगाकर ही वध करूँगा तेरा।'

और यह कहकर उसने पीताम्वर झटके से खींचा उस सोते हुए मनुष्य का और जब वह हिला डुला भी नहीं तो एक लात मारी उसे और अट्टहास करता हुआ बोला—'मूर्ख ! इस नाटकीय ढँग से प्राण वचाना चाहता है ?

लात लगते ही उस व्यक्ति ने करवट वदली और उठ बैठा। काल-यवन को यह देख कर आश्चर्य हुआ कि 'यह तो कृष्ण नहीं है। फिर कौन हैं यह ? कोई भी हो, छोड़ूँगा नहीं इसे।'

तभी उस जागे हुए मनुष्य ने नेत्र खोल कर कालयवन की ओर क्रोध पूर्वक देखा। वस उसका देखना भर था कि कालयवन तुरन्त भस्म हो गया। किसी व्यक्ति को भस्म हुआ देख कर उस व्यक्ति का क्रोध तुरन्त दूर हो गया और वह सोचने लगा कि 'यह कौन था जो भस्म हो गया वेचारा ?'

उसी क्षण कृष्ण उसके समक्ष प्रकट हो गये, बोले—'भक्तवह मुचु-कुन्द ! तुम धन्य हो, जो संसार को नष्ट करने में समर्थ राक्षस को भस्म कर दिया। वास्तव में यह वड़ा उपकार हुआ हैं तुम्हारा।'

मुचुकुन्द एक राजा थे, जो अपनी त्राटक सिद्धि के कारण ही काल-यवन को भस्म करने में समर्थ हुए। कृष्ण उनकी शक्ति से परिचित थे, इसलिये काल यवन को इस प्रकार यहाँ तक ले आये और उसको मारने में सफलता प्राप्त की।

भगवान श्री कृष्ण के दर्शन करके मुचुकुन्द भी धन्य हो गये। उन्होंने उनकी स्तुति करते हुए निवेदन किया—'धन्य हो प्रभो ? आपने इसी वहाने दर्शन देकर मुझे कृतार्थ कर दिया। वस्तुतः यह आपकी परम कृपा का ही फल है जो कालयवन जैसा भयंकर दैत्य

भस्म हो गया, अन्यथा मुझ अकिंचन के द्वारा यह कभी भी सम्भव नहीं था।'

मुग्धा व्रज गोपियाँ

और व्रज की गोपियाँ कृष्ण के पीछे-पीछे क्यों घूमती थीं। शृङ्गार रस के रसिकों और कवियों ने उन पर कुछ आक्षेप किये हैं, किन्तु वे आक्षेप सभी दृष्टियों से निराधार थे। मुख्य बात तो यह थी कि उस समय कृष्ण की आयु ही आठ-नौ वर्ष के मध्य थी, जिसमें काम-भाव का उदय ही नहीं होता।

कृष्ण आरम्भ से ही योगाभ्यासी रहे थे। उस आयु में भी उनकी बुद्धि में विवेक जाग्रत् था। वे नादयोग के परम ज्ञाता तो थे ही, त्राटक योग में भी पीछे नहीं थे।

यही कारण था कि वृज की गोपियाँ ही नहीं समस्त पुरुष समुदाय भी उनसे उतना ही प्रेम करता था। बालक, युवा, वृद्ध कोई भी ऐसा नहीं था जो कृष्ण से किसी प्रकार से रुष्ट हो अथवा उनसे विद्वेष मानता हो।

फिर मनुष्य ही क्या, पशु-पक्षी, कीट-भृङ्ग, नाग, श्वान आदि प्राणी भी उनके अनुगत थे। वे जिधर जाते उधर ही यह जीवगण चलते थे। गायें तो जब तक उन्हें देख नहीं लेतीं, तब तक अन्न-जल ही ग्रहण नही करती थीं। यहाँ तक कि वृक्ष भी उनके दृष्टिपात भर से स्तब्ध हो जाते। सरोवर और यमुना भी अपनी तरंगों को छोड़े हुए अत्यन्त शान्त दिखाई देती थी।

उनकी वंशी में मादकता थी तो दृष्टि में मोहित करने की शक्ति। देवगण भी उनके दर्शन के लिए लालायित रहते थे। उन्हें मारने के

लिये भी, जो भी असुर आये, वे सब उनकी दृष्टि के वश में हो कर ही उचित ढंग से प्रतिरोध नहीं कर पाते थे।

अक्रूर का अनुयायी होना

कंस ने अक्रूर को भेजा उन्हें लिवा लाने के लिये। उद्देश्य था कि कृष्ण-बलराम दोनों को मरवा दिया जाय। अक्रूर वृन्दावन पहुँचे, किन्तु उनकी एक दृष्टि में ही अनुयायी बन गये। उन्होंने कंस द्वारा बुलाये जाने का उद्देश्य भी उन्हें निःसंकोच रूप से बता दिया। कृष्ण-बलराम चल पड़े ब्रजवन को रोता-बिलखता छोड़ कर।

अक्रूर पर उनकी त्राटक शक्ति का इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि जब वे स्नानार्थ यमुना जल में उतरे तब गोता लगाने पर जल में भी कृष्ण दिखाई दिये। बाहर, रथ पर देखें तो कृष्ण और जल में देखें तो कृष्ण, यह त्राटक सिद्धि का ही प्रभाव था।

कंस भी प्रतीकार न कर सका--

कंस महाबली और अत्यन्त प्रतापी राजा माना जाता था। किन्तु वह उच्छृंखल और अत्याचारी था। जप-तप-विहीन, कर्म-विहीन तथा नीति-धर्म से भी विहीन था। इसीलिये समस्त ऋषि-मुनि, धर्म-विद् सन्तजन और प्रजाजन भी उससे परेशान थे और उसके शासन का अन्त देखना चाहते थे।

कृष्ण मथुरा में आये और जिस पर उन्होंने अपनी दृष्टि डाली वही उनका हो गया। यहाँ भी उन्होंने अनेक अत्याचारियों का वध किया। वे जिस शत्रु का वध करते, वही निरुपाय हो जाता।

मल्लशाला में मल्लों के साथ युद्ध किया कृष्ण ने तो वे सब एक-एक कर धराशायी होते चले गये। कंस अपने वीरों की इस पराजय से

व्याकुल हो रहा था। किन्तु उसे ऐसा कोई उपाय दिखाई नहीं दे रहा था कि कृष्ण-बलराम को किस प्रकार मारा जाये ?

कृष्ण का अन्तिम लक्ष्य कंस था। उन्होंने उसकी ओर भर नजर देखा, त्यों ही वह किंकर्तव्य विमूढ़ हो गया। वह उनकी दृष्टि के प्रभाव में ही इतना स्तम्भित हो गया था कि कुछ प्रतिकार ही नहीं कर पाया। यहाँ तक कि अपनी कमर में बँधी हुई तलवार निकाल कर प्रतिरोध करने का भी ध्यान नहीं रहा उसे।

कंस के मरेने पर विरोधी भी ठण्डे पड़ गये। कृष्ण ने जिस विरोधी को भी मुसकान भरी दृष्टि से देखा, वही शक्ति हीन होकर उनका ही हो गया। जो विरोधी सामने आया, वह उसी शक्ति से मारा गया और अन्त में सर्वत्र शान्ति हुई तो भी उसी शक्ति के बल पर।

कंस की माता, यद्यपि अपने पुत्र की मृत्यु से दुःखित थी तो भी कृष्ण से दृष्टि मिलते ही, अपने दुःख को भूल गई। उसने यह सहज रूप से स्वीकार कर लिया कि कंस के मारने में कृष्ण का कुछ दोष नहीं था, वह तो अपनी उच्छ्रंखलता के कारण ही मारा गया है।

उग्रसेन तो पहिले से ही अपने पुत्र का मोह छोड़ चुके थे। इसलिये उन्होंने कंस को मारने वाले कृष्ण का स्वागत ही किया। वस्तुतः उनको अपनी ओर आकर्षित करने में भी कृष्ण कीं अपनी योगःसिद्धि ही सहायक हुई थी। इसीलिये उन्होंने यन्त्रवत् कृष्ण का आभार हीं माना।

कृष्ण द्वारा वत्स और गोपों की सृष्टि

एक बार कृष्ण के अद्‌भुत कर्मों को देखकर सृष्टिकर्त्ता ब्रह्माजी ही भ्रम में पड़ गये। वे सोचने लगे कि 'क्या यह ग्वाला कृष्ण भगवान् हो सकता है ?'

उनका हृदय कभी कहता कि हो सकता है, कभी कहता कि नहीं हो सकता। इस प्रकार वे निश्चय-अनिश्यच भँवर में डूब-उतरा रहे थे,

तभी उनके मन में विचार उठा कि परीक्षा क्यों न ले ली जाय इसकी ?

और परीक्षा ली ब्रह्माजी ने तो वह भी विचित्र थी। जब सभी ग्वाले मिल कर भोजन कर रहे थे, तब उन्होंने उनके साथ के समस्त बछड़ें उड़ा लिये। ग्वालों को चिन्ता हुई कि बछड़े गये कहाँ ? तो कृष्ण बोले—'चिन्ता न करो, में अभीखोज कर लाता हूँ उन्हें।'

कृष्ण बछड़ों की खोज में उधर गये और इधर ब्रह्माजी ने उन ग्वाल-बालों को भी उड़ा लिया। कृष्ण लौटकर आये तो वहाँ ग्वाल-बाल भी न मिले। वह देखकर आश्चर्य हुआ उन्हें।

किन्तु यह समझते भी बहुत देर न लगी कि यह कार्य ब्रह्माजी का है। उन्होंने सोचा—'तो अब ब्रह्माजी को ही शिक्षा देनी होगी। यह बूढ़े होकर बौरा गये हैं।'

कृष्ण ने भर दृष्टि दिशाओं की ओर देखा। फिर क्या था, उतने ही बछड़े और ग्वालें विभिन्न दिशाओं से आ-आकर वहाँ एकत्र हो गये। यह सब उसी-उसी रूप-रंगके थे, जिसके पहिले बछड़े और ग्वाले खोचुके हैं। उनके आकार, प्रकार, रूप-रंग वस्त्र तथा गणना आदि में भी कोई अन्तर नहीं था।

यह कार्य इतनी शीघ्र हो गया कि किसी को संदेह भी न हुआ उनके नकली होने का। कृष्ण नित्य प्रति उन बछड़ों और ग्वाल-बालों के साथ गाँव लौटते और प्रातःकाल वन में चले जाते। सभी उन्हें असलीं ही समझे हुए थे।

कुछ दिन तक ब्रह्माजी उन पर नित्य प्रति दृष्टि रखते रहे। जो बछड़े और ग्वाले उन्होंने उड़ाये थे, उनमें और इनमें किसी बात का लेशमात्र भी अन्तर नहीं था। ब्रह्माजी समझ गये कि कृष्ण सर्व समर्थ हैं, इनकी तुलना नहीं की जा सकती। अतएव उन्होंने छिपाये हुए सभी बछड़े और ग्वाले प्रकट कर दिये तथा अपने अपराध पर कृष्ण से क्षमा-याचना की।

गांधारी की दृष्टि से अंगों की सुदृढ़ता--

महाभारत युद्ध से पहिले की बात है—कौरवों की उच्छृंखलता बढ़ रही थी और वे पाण्डवों पर भाँति-भाँति के अत्याचार करने से नहीं चूक रहे थे। पाण्डव धर्मात्मा थे, इसलिये वे पीड़ित होकर भी धर्म-विहीन प्रतीकार नहीं करना चाहते थे और जहाँ तक सम्भव हुआ उन अत्याचारों को सहते रहे।

किन्तु वे बलवान भी कम नहीं थे। कौरव उनकी व्यक्तिगत शक्ति के समक्ष भी ठहर नहीं पाते थे। इसलिये कौरव किसी प्रकार से भी उनका बध करने के पक्ष में थे। किन्तु वे उन्हें वश में करने मे समर्थ न थे, इसलिये अवसर की ताक में बैठ जाते।

गान्धारी कौरवों की माता थी। उसके पति धृतराष्ट्र जन्म से अन्धे थे, इसलिये वह जब से विवाहित होकर आई, तभी से अपनी आँखों पर पट्टी बाँधे रहतीं। इसलिये उसकी नेत्र शक्ति त्राटक शक्ति के रूप में परिवर्तित हो गई थी।

उसे अपने पुत्रों की दुर्बलता का पता था और वह यह भी जानती थी कि कौरव-पाण्डवों से सदा छेड़छाड़ करते रहते हैं, इसलिये किसी दिन युद्ध छिड़ सकता है। वह शंकित थी कि कहीं पाण्डवगण मेरे पुत्रों को मार न डालें, इसलिये उन्हें सुदृढ़ शरीर बना देना चाहती थी।

और एक दिन यही हुआ—उसके अन्य सभी पुत्र तो निर्वस्त्र, नंगे खड़े हो गये, किन्तु दुर्योधन अपनी लँगोटी नहीं उतार सका लज्जा के कारण। गान्धारी ने अपनी पट्टी हटा कर उन सभी पर दृष्टि डाली। सभी के अंग-प्रत्यंग उसकी दृष्टि शक्ति डाली और कहा कि तुम्हारे किसी भी अंग पर किसी भी अस्त्र-शस्त्र का प्रभाव न पड़ेगा। सभी अंग-प्रत्यंग लोहे के समान सुदृढ़ हो जाँयगें।

गान्धारी की दृष्टि शक्ति के प्रभाव से उसके सभी पुत्रों के अंग-

प्रत्यंग लोहे के समान सुदृढ़ और शस्त्रादि से अभेद्य हो गये, किन्तु दुर्योधन लँगोटी पहिने रहा, इसलिये उसका वही अंग निर्बल रहा।

कृष्ण इस रहस्यको जानते थे कि दुर्योधन का तब तक मारा जाना सम्भव नहीं है, जब तक कि लँगोटी के भीतर वाले भाग पर प्रहार नहीं किया जाय। उन्होंने भीमसेन को वही करने की प्रेरणा दी, जिसने उनके निर्देशानुसार गदा प्रहार कर उसे मार डाला।

संजय द्वारा महाभारत युद्ध का आँखों देखा वर्णन

सामान्य दृष्टि वाला कोई मनुष्य उतनी दूर तक ही देख सकता है, जितनी दूर तक उसकी दृष्टि पहुँच सके। साथ ही यह भी आवश्यक है दृष्टि और दृश्य के मध्य में कोई वस्तु भी न आवे। क्योंकि बीच में कोई वस्तु रही तो वह वस्तु ही दिखाई देगी देखने वाले को।

किन्तु त्राटक साधना द्वारा प्राप्त दृष्टि में न तो दूरी बाधक होती है, न बीच में आने वाला दृश्य ही। त्राटक दृष्टि बीच के सभी दृश्यों से पार होती हुई सहज ही वहाँ जा पहुँचेगी जहाँ का दृश्य देखा जाना अभीष्ट है साधक को।

त्राटक दृष्टि ही दिव्य दृष्टि कहलाती है। इसकी प्राप्ति स्वयं की साधना से तो हो ही सकती है, सिद्ध पुरुषों, महात्माओं, के वरदान द्वारा भी सम्भव है।

महाराज धृतराष्ट्र महाभारत युद्ध का हाल जानना चाहते थे। उनकी उत्कण्ठा देखकर श्रीवेदव्यास ने संजय को दिव्य दृष्टि प्रदान की। सजय स्वयं भी एक त्राटक अभ्यासी था, इसलिये उसकी दृष्टि में बहुत क्षमता आगई थी।

संजय धृतराष्ट्र को महाभारत युद्ध का समस्त हाल राजभवन में

बैठे-बैठे ही सुनाते रहे। वहाँ जो कुछ घटित हो रहा था, संजय के लिये वह सब साकार हो रहा थां। वह इसी प्रकार दिखाई दे रहा था, जैसे आधुनिक समय में सिनेमा में दिखाई देता है।

विराट्-दर्शन और दिव्य दृष्टि

भगवान् ने अपने विराट स्वरूप का दर्शन कराया था अर्जुन को। इससे पहिले, कौरव सभा में भी वैसा ही रूप दिखाया था। किन्तु विना दिव्य दृष्टि के विराट्-दर्शन असंभव था, ईसलिये जिन-जिनको यह रूप दिखाया जाना अभीष्ट था, उन-उन को दिव्य-दृष्टि प्रदान की गई थी।

कौरव सभा में धृतराष्ट्र ने भी विराट्-दर्शन की कामना की थी, इसलिये भगवान् ने उसे भी उस दृष्टि से उपकृत किया। भीष्म, द्रोण, कृप आदि जो भी विराट्-दर्शन के अधिकारी हो सकते थे, सभी उसका तात्कालिक लाभ उठा सके। किन्तु दुर्योधनादि कौरव अनधिकारी होने के कारण उस रूप को ठीक प्रकार से न देख सके।

सूर्य के अदृश्य होने पर जयद्रथ का वध

घटना महाभारत युद्ध की है। कौरवों और उनके पक्ष के योद्धाओं ने मिल कर अकेले अर्जुन कुमार अभिमन्यु को छल-पूर्वक मार डाला। उस कुकृत्य में जयद्रथ को अधिक दोषी मान कर उसे मारने की इस प्रकार प्रतिज्ञा कर डाली—'मैं कल जयद्रथ को अवश्य मार डालूँगा, क्योंकि वही पापी मेरे पुत्र की हत्या में मुख्य कारण है। यदि मैं उसे कल सूर्यास्त से पहिले न मार डालूँ आत्महत्या द्वारा घोर पापियों के गति को प्राप्ति करूँ।'

अर्जुन की इस प्रतिज्ञा का समाचार जयद्रथ ने भी सुन लिया और वह अत्यन्त भयभीत होकर कहीं भाग जाना चाहता था, कि दुर्योधन ने

उसे सान्त्वना दी और कड़ी सुरक्षा व्यवस्था कर दी। प्राण-भय से भीत जयद्रथ अब बहुत सतर्कता पूर्वक केवल कौरव महारथियों के साथ ही रहता था।

दूसरा दिन तेजी से निकल रहा था। अर्जुन प्राणप्रण से युद्ध करता हुआ जयद्रथ की खोज में आगे बढ़ रहा था। तभी कौरवों ने भयंकर शस्त्रास्त्रों की वर्षा द्वारा आकाश में घोर अन्धकार कर दिया, जिसे अर्जुन ने अपने दिव्यास्त्र से नष्ट कर डाला। उस समय छः महारथी मिलकर जयद्रथ की रक्षा कर रहे थे, इसलिये उसका मारा जाना सरल कार्य नहीं था। किन्तु यदि वह सूर्यास्त पूर्व न मारा गया तो अर्जुन को अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करने के लिये आत्महत्या करनी होगी। ऐसा विचार कर भगवान् ने सूर्य की ओर देखा, जिससे उनकी गति मन्द हो गई और वह बादलों के आवरण में छिप गया। इससे यह धारणा बनी कि सूर्यास्त हो चुका है।

अब जयद्रथ निश्चिन्त था, युद्ध बन्द होचुका था और अर्जुन आत्मघात की तैयारी कर रहा था। यह देखकर जयद्रथ हँसता हुआ वहाँ आया ओर अर्जुन की हँसी उड़ाने लगा। तभी कृष्ण ने आकाश की ओर दृष्टि भर देखा तो बादल छट गये और सूर्य प्रकट हो गया। कृष्ण ने कहा—'अर्जुन। सूर्य अस्त नहीं हुआ, बादलों में छिप गया था। शत्रु को मार कर अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर।'

फिर क्या था ? अर्जुन ने गाण्डीव उठाकर शर संधान किया और जयद्रथ का मस्तक उड़ा दिया।

दृष्टिपात से मरणासन्न को जीवन लाभ

महायोगी मत्स्येन्द्रनाथ और उनके शिष्य गोरखनाथ एक बार कौण्डिन्यपुर पहुँचे, जहाँ नगर के मध्य की एक चौरगी (चौकी) पर एक

हाथ-पाँव कटा बालक पीड़ा से छटपटाता दिखाई दिया। उसके चारों ओर स्त्री-पुरुषों की भीड़ लगी थी, जिसे राजा के सैनिक कभी-कभी डाँट फटकार कर वहाँ से हटा देते। किन्तु भीड़ पुन इकट्ठी हो जाती थी।

गुरु-शिष्य ने भीड़ में खड़े होकर लोगों की बातें सुनीं तो पता चला कि वह बालक वहाँ के राजा शशाँगड़ का पुत्र कृष्णागर है। राजा ने किसी अज्ञात अपराध के कारण उसके हाथ-पांव कटवा कर यहाँ डलवा दिया था। राजा की इस क्रूरता के कारण सभी लोग उसकी निन्दा कर रहे थे।

मत्स्येन्द्रनाथ ने उस लड़के का पुर्व इतिहास जानने के उद्देश्य से ध्यान लगाया तो उन्हें ज्ञात हुआ कि एक बार राजा शशांगर कृष्णा नदी पर स्नान करने के पश्चात् सूर्य को अर्घ्य दे रहा था, तभी उसकी अंजुलि में शुक्र की बूँदें आगिरी। भगवान् शकर के उस अमोघ शुक्र से तुरन्त ही एक बालक प्रकट हो गया। वही बालक इस राजा का अयोनिज पुत्र था।

बालक बड़ा हुआ, वह तीव्र बुद्धि का तथा होनहार था। किन्तु रानी ने उस पर व्यभिचार का दोप लगाकर उसे मरवाने का षड्यन्त्र रचा और उसी के कारण बालक की यह दुर्दशा हुई।

मत्स्येन्द्रनाथ ने बालक की सभी बातें गोरखनाथ को बताई तो उन्होंने प्रार्थना की—'गुरुदेव ! बालक तो बड़ा अद्भुत है, अतः इसकी प्राणरक्षा करके अपने साथ ले लेना चाहिये।'

गुरु ने टालने के उद्देश्य से कहा—'गोरखनाथ ! तुम ऐसी ही दया-माया में फँसे रहते हो। सभी प्राणी अपने कर्म तथा देह धर्म के अनुसार ही फल-भोग प्राप्त करते हैं, इसीलिये भोगने के लिये विवश हैं। फिर, हम तो योगी-संन्यासी हैं, उस लुंज-पुंज को कहाँ तक ढोते फिरेंगे ?

गोरखनाथ ने राग्रह पूर्वक पुनः निवेदन किया—'गुरुजी ! प्रथम तो यह बालक ऐसी दशा में होने के कारण ही आपकी दया और सहायता

का पात्र है, दूसरे यह भगवान् शंकर के शुक्र से उत्पन्न हुआ है, इसलि अलौकिक तथा दिव्य भी है। फिर यदि इसे स्वस्थय करके आप अप सेवा में ले ले लेंगे तो बेचारा उपकार भी मानेगा।'

गोरखनाथ का बहुत आग्रह देखकर योगिराज ने स्वीकृति देते हु कहा—'वत्स ! इसे साथ ले चलने के लिये हमें राजनियमों के अनुसा राजा से अनुमति ले लेनी चाहिये।'

इस निश्चय के साथ गुरु-शिष्य दोनों ही राजा शशांगर के पा पहुँचे। उसने उनका परम तेज और योगी भेप देखकर अत्यन्त आद किया। तभी गोरखनाथ ने उससे कहा—'राजन् ! तुम्हारा जो बालक किसी अपराध में हाथ-पाँव विहीन करके चौरंगी पर डाला गया है। यदि आपकी अनुमति हो तो उसे हम अपने साथ ले जांब। ऐसी हमारे गुरुजी की इच्छा है।

राजा को इसमें क्या अपत्ति थी ? उसने सोचा चलो सहज में ही कंटक कटा उसने कहा—'योगीश्वरो ! आप उस बालक को इच्छानुसार लेजा सकते हैं।'

गुरु-शिष्य दोनों ही उस स्थान पर पहुँचे जहाँ वह बालक पड़ा हुआ अत्यन्त पीड़ा से छटपटा रहा था। गुरु का संगेत मिलने पर गोरखनाथ ने उसे दृष्टि गढ़ाकर देखा और फिर उसके शरीर पर हाथ फेरने लगे। उनके देखने मात्र से बालक की समस्त पीड़ा तुरन्त दूर हो गई।

उसके बाद गोरखनाथ ने कहा—'गुरुदेव ! यह बालक इस चौरंगी पर पड़ा है, इसलिये इसका नाम चौरंगीनाथ रखना अधिक उचित रहेगा।'

मत्स्येन्द्रनाथ ने तुरन्त स्वीकृति दी—'ठीक है, ऐसा ही करो वत्स ! यही नाम उचित है।'

गोरखनाथ ने चौरंगीनाथ को गोद में उठाया और उसे लेकर बदरिकाश्रम जा पहुँचे वहाँ उन्होंने भगवान् शंकर के दर्शन किये और

उनसे प्रार्थना की—'हे आशुतोष प्रभो ! इस बालक पर कृपा कीजिये। इसे भयमुक्त और योगयुक्त बनने की बुद्धि प्रदान कीजिये दयालो।'

भगवान् शंकर ने प्रसन्न होकर 'तथास्तु' कहा। इससे गुरु-शिष्य दोनों को ही प्रसन्नता हुई बालक भी उस वर दान की बात जान कर सुखी हुआ। यही बालक आगे चलकर नाथ सम्प्रदाय में प्रसिद्ध चौरंगीनाथ हुआ था।

त्राटक शक्ति से शिला का स्थिर रहना—

शंकरजी से वर प्राप्ति के पश्चात् गोरखनाथ उसे पर्वत की एक गुफा में ले गये और वहाँ बैठने की आज्ञा देते हुए कहा—'वत्स ! तुमको यहीं रह कर तपस्या करनी है। मुझे तीर्थयात्रा के लिये जाना है, इसलिये तुम्हें यहाँ छोड़ना आवश्यक है। किन्तु यहाँ रहते हुए तुम्हें निरन्तर यह ध्यान रखना होगा कि तुम्हारे ऊपर जो शिला है, वह चाहे जब गिर सकती है। इसलिये तुम्हारी दृष्टि निरन्तर इसी पर टिकी रहे। क्योंकि दृष्टि के प्रभाव से वह अवश्य ही यथा स्थान टिकी रहेगी। यदि तुमने दृष्टि हटाई तो यह शिला गिरकर तुम्हारी मृत्यु में कारण बन सकती है।'

चौरंगीनाथ ने आदेश-पालन का विश्वास दिलाया और तब गोरखनाथ ने उसे दीक्षा दी और कहा कि 'यात्रा पूरी होने पर मैं यहाँ लौटूंगा।'

तदुपरान्त गोरखनाथ गुफा से बाहर निकले और सुरक्षा की दृष्टि से उन्होंने गुफा का द्वार एक शिलाखण्ड से ढक दिया और माता चामुण्डा का आह्वान कर उनसे प्रार्थना की—'माता ! आप बालक की

रक्षा करती रहें और उसके आहार के लिये नित्य प्रति एक फल देने की भी कृपा करें ।'

चामुण्डा 'तथास्तु' कह कर अन्तर्धान हो गईं। गोरखनाथ फिर अपने गुरु के पास आये और सब वृत्तान्त उन्हें निवेदन किया। फिर दोनों ही तीर्थ यात्रा के लिये चल पड़े ।

गोरखनाथ के आदेशानुसार गुफा में बैठा हुआ चौरंगीनाथ गुरु-प्रदत्त मन्त्र का जप करता हुआ अपनी दृष्टि निरन्तर सिरके ऊपर वाली गुफा पर ही टिकाये रहा। इसमें उसने पल भर के लिये भी चूक नहीं की ।

उधर चामुण्डा अपने वरदान के अनुसार उसकी रक्षा भी करती रहीं और एक फल भी नित्यप्रति वहाँ रखती रहीं। किन्तु चौरंगीनाथ ने उन फलों की ओर देखा तक नहीं। उसे भय था कि दृष्टि चूकते ही शिला के गिरने से मृत्यु हो जायगी। इसलिये वह निराहार रह कर ही तपस्या करता रहा ।

गोरखनाथ लौटे तो द्वार पर ही चामुण्डा के दर्शन हुए, जिन्होंने कहा—'योगिराज ! मैं आपको दिये वचनों के अनुसार ही आपके शिष्य की रक्षा में तत्पर रही हूँ। मेरे द्वारा नित्य प्रति पहुँचाये जाने वाले फलों का तो वहाँ ढेर ही लग गया, उसने एक भी फल को आँख उठा कर नहीं देखा।'

गोरखनाथ ने प्रणाम पूर्वक कहा—'माता ! वह देखता कैसे ! बेचारा प्राणभय के कारण अपनी दृष्टि सिर के ऊपर की शिला पर ही टिकाये रहा होगा।'

चामुण्डा अदृश्य हो गई तब गोरखनाथ गुफा में प्रविष्ट हुए। उन्हें वहाँ फल ही फल दिखाई दिये तो उन्होंने पुकार कर कहा चौरंगीनाथ ! मैं तीर्थयात्रा से लौट आया हूँ। तुम इन फलों के ढेर को हटा कर बाहर निकल आओ।'

गोरखनाथ की आज्ञा सुनते ही चौरंगीनाथ फलों को हटाकर वाहर निकल आया। गुरु गोरखनाथ ने उस पर दृष्टिपात करते हुए उसके लुंज पुंज अंग की ओर देखा। फिर क्या था ? उसके हाथ-पांव तुरन्त उत्पन्न हो गये। शरीर की दुर्बलता दूर हो गई और वह हृष्ट-पुष्ट दिखाई देने लगा।

त्राटक शक्ति से राज सेना का नष्ट होना

चौरंगीनाथ अब सब प्रकार से योग्य और सामर्थ्यवान बन चुका था। अब वह अपने गुरू के साथ कौण्डिन्यपुर नगर के पास पहुँचे और वहीं ठहर गये। गोरखनाथ के आदेश से वह अपनी विद्या के प्रभाव से राज्य में अनेक प्रकार के उपद्रव कराने लगा।

उन उपद्रवों के कारण सर्वत्र बेचैनी फैल गई। राजा के गुप्त चरों को बहुत दिनों तक तो उन उपद्रवों का कुछ कारण ही समझ में नहीं आया। अधिक प्रयत्न के बाद वे जान सके कि नगर से वाहर जो दो योगी ठहरे हुए हैं, वे ही इन उपद्रवों के मूल कारण है। यही वात उन्होंने राजा के पास जाकर वता दी।

राजा ने अपने सेवकों को आदेश दिया कि दोनों योगियों को पकड़ लायें। किन्तु पकड़ने को जो भी गया, वह लौटकर ही नहीं आया। तब उसने कुछ सैनिक भेजे, किन्तु वे भी मारे गये।

अब राजा ने अधिक कुपित होकर सेना बुलाई और उसके साथ स्वयं भी चल पड़ा। गोरखनाथ को सेना सहित राजा के आने का पता चला तो चौरंगीनाथ से बोले—'वत्स ! कुकर्मी राजा को उसके कर्मों का फल चखाना अनुचित नहीं है, इसलिये उससे युद्ध करके विजय प्राप्त करो।'

गुरु की आज्ञा पाकर चौरंगीनाथ उस सेना के सामने हुआ। कहाँ तो राजा की बड़ी सेना और कहाँ अकेला चौरंगीनाथ। राजा ने समझा

कि 'अकेला योगी क्या करेगा ? मेरी सेना अभी इसे भूने डालती है भुनगे के समान।'

किन्तु चौरङ्गीनाथ ने न कोई शस्त्र उठाया न किसी प्रकार से युद्ध ही किया, केवल देखता रहा भर नजर उस सेना की ओर राजा को। पता नहीं क्या हुआ कि सेना स्तम्भित हो गई। उसे आगे बढ़ने का साहस ही नहीं हुआ।

यह देखकर राजा आगे बढ़ा यह कहते हुए कि 'सैनिको ! तुम्हें क्या हो गया है जो इस निहत्थे योगी को भी नहीं पकड़ सकते ? चलो, बढ़ो आगे, मैं सबसे आगे चलता हूँ।

तभी चौंरङ्गीनाथ ने राजा पर दृष्टिपात किया। बस दृष्टिपात करने मात्र से राजा भाग खड़ा हुआ। राजा भागा तो उसकी सेना ही कैसे टिकती ? वह भी भाग निकली। जिसे, जिधर मार्ग दिखाई दिया उधर ही चला गया।

अब तो राजा समझ गया कि योग शक्ति के समक्ष उसकी सैन्य शक्ति की चलेगी नहीं। वह चौरंगीनाथ की शरण में आकर बोला—'योगेश्वर ! मेरा अपराध क्षमा करिये। आप चमत्कारी पुरुष हैं, मेरी आपकी क्या तुलना हो सकती है ? मुझे आज्ञा करिये कि आपकी क्या सेवा करूँ ?'

तभी गोरखनाथ वहाँ आ गये। राजा ने उनको प्रणाम किया तो वे आशीर्वाद देते हुए बोले—'राजन् ! तुम्हारा कल्याण हो। जिस योगी ने तुम्हें हराया है उसे पहिचानो।'

राजा बहुत प्रयत्न करके भी न पहिचान सका चौरंगीनाथ को। यह जान कर गोरखनाथ ने पुनः कहा—'याद करो कि आज से बारह वर्ष पहिले तुमने अपने पुत्र के हाथ-पाँव कटवा कर उसे चौरंगी पर डलवा दिया था।'

उसने नम्रता से स्वीकार किया—'हाँ योगिराज ! ऐसा मुझे उसके एक जघन्य अपराध के कारण करना पड़ा था ।'

गोरखनाथ बोले—'वह बालक निर्दोष था राजन् ! तुम्हारी रानी ने उस पर मिथ्या दोषारोपण किया था ।'

राजा ने कुछ सोचते हुए पूछा—'वह बालक अब तक मर गया होगा । यदि जीवित भी हो तो उसका जीवन ही व्यर्थ हो गया । पता नहीं, वह अभागा कहाँ होगा ? अथवा होगा भी या नहीं ?'

गोरखनाथ ने कहा—'महाराज ! जिसने तुम्हें हराया है, यह वही तुम्हारा लुंज-पुंज पुत्र है, जो चौरंगी पर डलवा दिया था तुमने ।'

राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ और वह चौरंगीनाथ को देखता हुआ बोला—'योगेश्वर ! इसके तो हाथ-पाँव सभी कुछ हैं, यह वह लड़का कैसे हो सकता है ?'

गोरखनाथ ने उसकी जिज्ञासा शान्त करते हुए कहा—'राजन् ! हम निष्काम भाव से योगाभ्यास करते और सदैव जन-कल्याण में ही लगे रहते हैं । इसलिए हम जब, जो कुछ करना चाहें, सहज रूप से कर सकते हैं । कटे हाथ-पाँव आदि अंगों को जोड़ना और जुड़े हुए अंगों को काट डालना हमारे लिए दृष्टिमात्र से सम्भव है । हम चाहें तो नया संसार ही रच डालें । इस बालक के हाथ पाँव भी गुरुकृपा से और हमारे देखने मात्र से उत्पन्न हो गये ।'

राजा ने गोरखनाथ से क्षमा माँगी और पुत्र को हृदय से लगा लिया फिर वह उन दोनों को अपने राजभवन में लेगया, जहाँ राजी ने भी चौरंगीनाथ से क्षमा-याचना की ।

लाखों पिंगलाओं की रचना

एक बार गोरखनाथ तीर्थयात्रा करते हुए गिरिनार पर्वत पर पहुँचे

वहाँ महायोगी भगवान् दत्तात्रेयजी का स्थान था। गोरखनाथ ने उनके पास जाकर चरणों में प्रमाण किया।

दत्तात्रेय ने उन्हें आशीर्वाद देकर बैठने का संकेत किया। फिर मत्स्येन्द्रनाथजी के विषय में और अन्यान्य विषयों में चर्चा करते हुए उन्होंने कहा—'वत्स! अवन्ति नगरी का राजा भर्तृहरि बारह वर्ष से श्मशान भूमि में निरन्तर 'पिंगला-पिंगला' की रट लगाये हुए बैठा है। उसकी पत्नी 'पिंगला' को मरे बारह वर्ष हो गये, जिसके शोक में वह इतना सन्तप्त है कि बिना कुछ खाये-पिये, बिना सोये-लेटे एक ही शब्द उच्चारण करता रहता है। इसलिए वह अवश्य ही अनुग्रह का पात्र है। तुम उसके पास जाकर कुछ ऐसा यत्न करो कि वह माया-मोह से मुक्त हो जाय।'

'जो आज्ञा' कह कर गोरखनाथ अपनी योगशक्ति से शीघ्र ही अवन्तिका के श्मशान में जा पहुँचे जहाँ राजा भर्तृहरी 'पिंगला-पिंगला' की रट लगाये हुए धरती पर बैठा हुआ आंसू बहा रहा था।

गोरखनाथ ने उसका मोह दूर करने के लिए एक उपाय सोचा और नगर में जाकर कुम्हार से मिट्टी का एक घड़ा ले आये और उन्होंने श्मशान भूमि में ही उस घड़े को जोर से धरती पर फेंक कर तोड़ डाला।

उसके बाद उन्होंने घड़ें के उन टुकड़ों को एकत्र किया और वहीं बैठ कर 'घड़ा-घड़ा' चिल्लाने लगे। उनके रोने-चीखने की आवाज बहुत करुण और तीव्र थी, जिसके आगे भर्तृहरि की रोने की आवाज भी दब गई।

भर्तृहरि की समझ में न आया कि मामला क्या है? उन्होंने समझा कि इस व्यक्ति का अपने किसी प्रियजन से वियोग हो गया होगा, इसीलिए यह इतना रो रहा है।

जब भर्तृहरि से न रहा गया तो उठ कर गोरखनाथ के पास पहुँचे और सान्त्वना भरे हुए शब्दों में बोले—'भई ! आप इस प्रकार से क्यों रो रहे हैं ?'

गोरखनाथ बोले—'देखते नहीं, मेरा घड़ा फूट गया है, अब यह कहाँ से आवेगा ?'

भर्तृहरि को हँसी आ गई, बोले—'मिट्टी के एक सामान्य घड़े के लिए इतना रोना-धोना तुम्हें शोभा नहीं देता। तुम तो कोई योगी, सन्त और विद्वान् प्रतीत होते हो।'

गोरखनाथ ने कुछ तुनक कर कहा—'योगी, सन्त, संयासी, सिद्ध पुरुष, विद्वान्, मूर्ख या मन्त्रज्ञ, कोई भी क्यों न हो, प्रिय वस्तु के वियोग में उसका दुःखित होना स्वाभाविक है।'

यह कह कर वे पुनः रोने लगे और राजा ने भी उन्हें पुन- समझाने का प्रयत्न किया—'अरे, आप तो व्यर्थ ही शोक कर रहे हैं। इस प्रकार का मिट्टी का घड़ा अभी कुम्हार के यहाँ से मिल सकता है।'

गोरखनाथ बोले—'महाराज ! आप तो अपनी मिट्टी की रानी का बारह वर्ष से शोक कर रहे हैं, फिर मैं भी अपने मिट्टी के घड़े का शोक करूँ तो आपको आश्चर्य क्यों होता है ?'

राजा ने कहा—'रानी की तुलना घड़े से कभी नहीं हो सकती। वह अलभ्य थी, घड़ा सुलभ है।'

गोरखनाथ ने दृढ़ता दिखाई—'राजन् ! आपकी रानी के समान तो बहुत-सी स्त्रियाँ मिल जाँयगी, किन्तु इसी मिट्टी का ऐसा ही घड़ा कहीं भी नहीं मिल सकता।'

भर्तृहरि भी कुछ उत्तेजित हो गए, बोले—'योगी ! तुम क्या कहते हो ? मेरी रानी पिंगला के समान तो संसार में एक भी स्त्री नहीं हो सकती।'

गोरखनाथ बोले—'राजन् ! तुम्हारी पिंगला जैसी तो लाखों पिंगलाएँ संसार में विद्यमान हैं। यदि चाहो तो दिखा भी सकता हूँ तुम्हें।'

राजा ने कहा—'अच्छा, दिखाओ।'

गोरखनाथ ने चारों ओर दृष्टि घुमा कर एक नई रचना कर डाली। भर्तृहरि ने देखा कि चारों ओर पिंगला ही पिंगलाएँ खड़ी थीं, जिनकी संख्या लाखों में होगी। राजा को विस्मय में खड़ा देख कर गोरखनाथ ने कहा—'राजन् ! इन पिंगलाओं में जो तुम्हारी पिंगला हो उसे पहिचानो और उससे बात कर लो।'

वे सभी पिंगलाएँ एक जैसे रंग, रूप और आयु वाली थीं। वस्त्र उन सभी के एस समान ही थे। किसी में किसी प्रकार का अन्तर ही नहीं किया जा सकता था, इसलिए यह निश्चय करना भी असंभव था कि उनमें असली पिंगला कौन है। अब राजा किससे बातें करें ?

राजा को यह देख कर और भी आश्चर्य हुआ कि वे पिंगलाएँ स्वयं ही उनके प्रति कुछ कह रही हैं। उनमें से किसी ने कोई एक बात बताई तो, दूसरी ने दूसरी और तीसरी ने तीसरी बात बताई। उनके दाम्पत्य जीवन में रहस्य-चर्चाएँ हुई थीं, वे भी उन्होंने बता डालीं। यह देखकर राजा बड़े आश्चर्य से यह सोच रहे थे कि 'क्या सभी पिंगलाओं को उनके समस्त गुप्त भेदों की जानकारी है ?'

अपना सन्देह दूर करने की दृष्टि से राजा ने उनसे और भी अनेक गुप्त बातें पूछीं, जिनके उन्होंने पूर्णतया ठीक उत्तर दिए। इससे राजा को यह विश्वास सहज ही हो गया कि यह सभी पिंगलाएँ मेरी एक पिंगला के ही अनेक रूप हैं।

तभी पिंगलाओं ने कहा—'महाराज ! अब आप शोक छोड़ दीजिए। संसार में कोई भी अमर नहीं है, सभी मरते हैं—कोई चार दिन पहिले, कोई चार दिन पीछे। हम भी यदि उस समय न मरतीं

तो, कभी न कभी तो मरतीं ही। जीवित रहतीं भी तो दस, बीस, पचास अधिक से अधिक सौ वर्ष तक। अन्त में तो मृत्यु को ही वरण करना होता। इस प्रकार संसार में जब मृत्यु ही सत्य है तो शोक किस बात का ? यदि जन्म-मरण के बन्धन के बन्धन से मुक्त होना है तो इस माया मोह का त्याग ही उचित है।'

राजा अवाक् हुए सुनते रहे. पिंगलाएँ कहे जा रही थीं—महाराज! भगवान् में चित्त लगाने से ही उद्धार होगा। आपके निकट यह परम योगेश्वर गोरखनाथ खड़े हैं, यह आपको आवागमन से मुक्त होने का उपाय बता देंगे। आप इन्हीं की शरण लीजिए।'

अब पिंगलाएँ अन्तर्धान हो गईं। राजा का चित्त भी माया-मोह-रहित तथा ज्ञान से सम्पन्न हो चुका था। उन्होंने गोरखनाथ के चरण पकड़ने चाहे, तभी वे पीछे हट गए। बोले—'राजन् ! आप भगवान् दत्तात्रेयजी के कृपापात्र हैं और मेरे गुरु मत्स्येन्द्रनाथ भी उन्हीं के शिष्य हैं। इसलिये मैं ही आपको अपना बड़ा गुरुभाई मान कर प्रणाम करता हूँ।'

राजा को मौन हुआ देख कर गोरखनाथ बोले—'राजन् ! अपना मन पक्का करो। यदि पिंगला के साथ सुख भोगते हुए राज्य करना चाहते हो तो मैं वैसा उपाय करूँ और वैराग्य लेना चाहते हो तो वह बताओ।'

राजा ने वैराग्य लेने का दृढ़ निश्चय किया, तब गोरखनाथ उन्हें भगवान् दत्तात्रेय की शरण में ले गए।

तिब्बती लामा द्वारा मृत शरीर का स्वसंचालन

त्राटक की महती शक्ति को स्वीकार करते हुए एक पाश्चात्य विशे-

पज्ञ ने अपनी 'इनविजिविल इन्फ्लूएन्स' नामक पुस्तक में एक विशेष घटना पर प्रकाश डाला था। इन विशेषज्ञ का नाम डॉ० अलेक्जेण्डर केनन था। श्री केनन हाँगकाँग में रहते थे तथा इंगलेंड की सरकार ने उन्हें 'नाइट' की उपाधि से विभूषित किया था।

श्री केनन आयु पर्यन्त आत्म तत्व की खोज में लगे रहे। इसके लिए उन्होंने चीन, तिब्बत, भारतवर्ष तथा अन्यान्य सुदूर देशों की यात्रा करके अनेक महत्वपूर्ण अनुभव प्राप्त किये थे। एक बार उन्होंने तिब्बत के एक लामा के निमन्त्रण पर वहाँ की यात्रा की थी। उनके साथ उनके स्त्री-बच्चे आदि भी थे।

वे एक पचास गज चौड़ी खाई पर बने हुए मठ पर पहुँचना चाहते थे। खाई के किनारे तक पहुँचने में उन्हें कोई कठिनाई नहीं हुई। किन्तु अब एक यह समस्या सामने थीं कि खाई के उस विस्तृत मार्ग को किस प्रकार पार किया जाय ? क्योंकि उसे पार करने के लिये कोई मार्ग प्रतीत नहीं होता था।

उन्होंने इधर-उधर ध्यान से देखा, तभी एक स्थान पर एक लामा खड़ा हुआ दिखाई दिया, जिसने उनको अभिवादन कर पूछा कि आप ही डॉ० अलेक्जेंडर केनन हैं ? हाँ में उत्तर मिलने पर लामा ने कहा कि आप अपने साथी स्त्री-बच्चे आदि को न ले चलें, यह यहाँ समीप में स्थित गाँव की एक धर्मशाला में ठहरेंगे और आप अकेले ही मेरे साथ चलेंगे।

यह सुनकर श्री केनन ने अपने स्त्री-बच्चे आदि को उस धर्मशाला में ठहरने के लिए भेज दिया और फिर स्वयं उस खाई के समीप जा पहुँचे। उन्होंने देखा कि जो लामा उन्हें लेने आया है, उसकी गतिविधियाँ स्वचालित यन्त्र के समान अद्‌भुत सी हैं, किन्तु वे कुछ बोले नहीं और उसके साथ खाई के पार जाने के लिये उत्सुकता पूर्वक खड़े हो गये।

तभी उस लामा ने कहा—'मैं आपको प्राणायाम की और शरीर शैथिल्य की ऐसी योग-विधियाँ बताता हूं, जिनके द्वारा आपका शरीर रुई के समान हल्का हो जायगा और तब आप बादलों के समान उड़ते हुए मेरे साथ ही इस खाई को पार कर लेंगे।'

श्री केनन को लामा की बात पर कोई विशेष विस्मय नहीं हुआ, क्योंकि उन्होंने भारतीय योगियों द्वारा की जाने वाली उन योग-साधनाओं के विषय में सुना था, जिनके द्वारा योगी पुरुष अणिमादि अष्ट सिद्धियाँ प्राप्त करके अद्भुत सामर्थ्यों से सम्पन्न हो जाते थे। उन सिद्धियों में अणिमा के द्वारा जीवन-चेतन अणु के समान होकर कण-कण की खोज कर सकती है।

महिमा सिद्धि में मनुष्य पर्वत के समान वृहदाकार और अत्यन्त शक्तिशाली बन जाता है। गरिमा में शरीर बहुत भारी हो जाता है और लघिमा में रुई के समान हल्का। प्राप्ति सिद्धि के द्वारा लाखों मील दूर तक के स्पर्श की सामर्थ्य मिलती है तथा प्राकाम्या सिद्धि से किसी भी प्रकार की कामना तत्काल पूर्ण हो सकती हैं।

ईशिता सिद्धि शरीर में विद्यमान चक्रों, कुण्डलिनी शक्ति और मन पर अधिकार करके इच्छानुसार प्रयोग की सामर्थ्य देती है। वशिता सिद्धि से समस्त पदार्थ और परिस्थितियाँ योगी के अधीन हो जाती हैं। यह आठों प्रसिद्ध सिद्धियाँ योग विद्या के द्वारा ही प्राप्त हो सकती है।

मन को संयम में करने के भी अनेकों प्रकार और फल हैं—यदि मन का संयम कण्ठ में किया जाय तो श्रेष्ठ स्वर की प्राप्ति,श्रोत्र में किया जाय तो अदृश्य ध्वनियों का श्रवण, नेत्र में किया जाय तो दूर-दर्शन और नाभि में किया जाय तो क्षुधा-पिपासा का अभाव हो जाता है। भारतीय योगीं विविध प्रकार के प्राणायाम भी जानते है। तब क्या यह विद्याएँ तिब्बत में भी विकसित हैं ?

श्री केनन द्वारा पूछने पर उस लामाने बताया कि 'एक समय वज्रयान-योगी पद्मसम्भव बौद्ध धर्म के प्राचारार्य भारत से तिब्बत में आये थे और उन्होंने योग-साधना प्रचार किया था।'

यद्यपि भारतवासी अपनी इस महती विद्या को धीरे-धीरे भूलते जा रहे हैं, किन्तु यहाँ पर आज भी अनेकों लामा इस गुह्य आत्माविद्या को जानते हैं। इसीलिए डॉ० लोबसाँग रम्पा जैसे योगज्ञाता अमेरिका आदि देशों तक में प्रसिद्ध हो चुके हैं।

इसके पश्चात्, श्री केनन ने उस लामा के द्वारा बताए हुए साधनों को करके जब अपने नेत्र खोले तब उन्हें यह देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ कि वे उस विस्तृत खाई को पार कर चुके हैं। उनकी समझ में नहीं आया कि हम कुछ ही क्षण पहिले तो खाई के उस पार थे, अब बिना चले हुए इस पार कैसे आ गये ?

वे वहाँ से चल कर मठ में पहुँचे तो मठाधीश लामा ने उनका- स्वागत किया श्री केनन का कहना है कि उस लामा के शरीर से बाहर तीन फिट के घेरे में नीले रंग का एक अद्भुत तेज दिखाई देता था। उनका लामा से बहुत देर तक वार्तालाप चलता रहा। लामा ने योग-विद्यापर बहुत कुछ प्रकाश डालते हुए योग विषयक अनेक चमत्कार भी प्रदर्षित किये।

उस समय लामा ने उनसे यह भी कहा कि 'यद्यपि योग विद्या चमत्कार-प्रदर्शन की वस्तु नहीं है, किन्तु आपको दिखाने का उद्देश्य यही है कि आप इस विद्या के प्रभाव की जानकारी लोगों को देते रहें।'

श्री केनन ने वहाँ रह कर योग के अनेक साधन सीखे। एक दिन उन्हें वहाँ एक अद्भुत चमत्कार देखने को मिला। कफन में लपेटा हुआ एक शव लाकर उनके सामने रखा गया और उसकी परीक्षा करने को

उन्हें कहा गया । श्री केनन ने परीक्षा करके बताया कि इसकी मृत्यु हुए तो चौबीस घण्टे से भी अधिक समय व्यतीत होगया होगा ।

किन्तु तभी लामा ने कोई मन्त्र-सा गुनगुनाया और उस शव पर अपनी आँखें गढ़ा दीं । इसके साथ ही वह बोला—'उठो भाई ! बड़ी देर से पड़े सो रहे हो ।'

लामा के इतना कहते ही मृतक ने अपनी आखें खोल दीं और चारों ओर दृष्टि घुमाने के पश्चात् उठ खड़ा हुआ । उसने श्री केनन के पास जाकर अभिवादन किया तो उन्हें यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह वही व्यक्ति था जो उन्हें योग-साधना करा कर खाई के उस पार से इस पार लाया था ।

तभी लामा ने बताया कि यह मनुष्य सात वर्ष से मरा हुआ है और अभी यह सैकड़ों वर्ष तक इसी प्रकार रखा जा सकता है । इस बीच श्री केनन के मन में जो भी शंका उत्पन्न हुई, लामाने उस-उस शंकाका समाधान उनके कहने से पहिले ही कर दिया । वह उनके मन में उठे प्रश्नों को भी बताता और साथ ही उनके उत्तर भी देता जाता था । इससे श्री केनन बहुत ही आश्चर्य चकित थे । उनकी समझ में यह नहीं आ रहा था कि लामा उनके मन की सभी बातों को किस माध्यम से जान लेता है !

वस्तुतः दूसरे के मन की बातें जानना त्राटक सिद्धि के द्वारा ही सम्भव है । इसके द्वारा दूसरों को प्रभावित कर अपने अनुकूल बनाया जा सकता या मूर्च्छित भी किया जा सकता है ।

श्री केनन ने उस लामा से त्राटक विद्या को ठीक प्रकार से सीखा, और जब वे वहाँ से लौटने लगे, तब खाई के समीप उन्हें वही पहिले वाला लामा मिला । अब उन्होंने उसे विशेष रूप से ध्यानपूर्वक देखा तो पाया कि वह किसी अन्य शक्ति के संकेत पर यन्त्र के समान कार्य करता है । उसकी आँखों की पुतलियाँ भी नही चल रही हैं ।

यह देख कर कि उनके साथ चलने वाला कोई जीवित मनुष्य नहीं, वरन् प्राणहीन शव है, श्री केनन को एक बार तो डर लगा। किन्तु फिर वे सँभल गये और उन्होंने सोचा कि उसके भी.र से बातचीत करते हुए वे लामा ही स्वयं चल रहे होंगे जो अथाह योग-बल से सम्पन्न हैं।

भारतवर्ष पर आक्रमण की विफलता

जब भारतवर्ष पर तुर्कों ने आक्रमण किया था, तब लीला ब्रज ने इसी त्राटक सिद्धि के बल पर उनका आक्रमण विफल करने में सफलता प्राप्त की थी।

आचार्य कमलरक्षित ने भी यवन सेना पर त्राटक युक्त पूर्ण कुम्भ का प्रयोग किया था, जिससे पाँच सौ यवन सैनिक रक्तवमन करते हुए नष्ट हो गये थे। इस तथ्य को जान कर यवन अत्यन्त क्रोधित हो गये और उन्होंने विक्रम शिला तथा नालन्दा के विशाल योग-ग्रन्थाकारों को ही भस्म कर डाला था। सिद्धपीठों का नष्ट किया जाना और बहुत-से योगियों की हिंसा होना भी इसी कुचक्र का परिणाम था, जिसके द्वारा विदेशी सैनिकों द्वारा इस देश को जीत लेना सरल होगया था। श्रीकेनन ने लामा से सीखी हुई त्राटक विद्या को ध्यान साधना का ही अंग मानते हुए लिखा है कि साधक लामा सूर्योदय के एक घंटे पहिले से सूर्योदय होने पर्यन्त इस साधना को किया करते थे।

शेर भी जिनके सामने अहिंसक हो जाते थे।

स्वामी रामतीर्थ, स्वामी विवेकानन्द स्वामी रामकृष्ण आदि के विषय में कहाजाता हैकि यह त्राटक सिद्ध योगी ही थे।यह जो कुछभी करते या

कहते उसमें उनका अपना कोई स्वार्थ नहीं रहता था,क्योंकि वे तो लोक-कल्याणार्थ समर्पित जीवन थे ।

उन्हें अपने विषय में कुछ भी चिन्ता नहीं थी। लोग उनके आशीर्वाद के लिये लालायित रहते थे। रोगियों को भी विश्वास था कि ऐसे महात्मा पुरुषों के दर्शन और चरण स्पर्श मात्र से सभी रोगों से छुटकारा मिल सकता है। इस प्रकार का विश्वास रखने वाले अनेकों रोगी इन सन्तों के दृष्टिपात मात्र से अपने को रोग-मुक्त हुआ अनुभव करते थे।

इन सन्त पुरुषों का न कभी किसी से भय हुआ और न इन्होंने किसी के विपरीत स्वभाव की कुछ चिन्ता ही की। इनके सामीप्य को प्राप्त होने वाला क्रूर से क्रूर मनुष्य भी अपने क्रूर स्वभाव को भूल जाता था।

मनुष्य ही क्या, पशु-पक्षी भी इनसे प्रेम करते थे। कोई भी जीव इनके प्रति अपने विपरीत स्वभाव के प्रदर्शन में अबाधित नहीं था। इनका व्यक्तित्व सभी प्राणियों को अपने अनुकूल बनाने में समर्थ था। जो प्रतिकूल होता, वह भी अनुकूल बन जाता।

शेर कितना क्रूर और हिंसक प्राणी है। वह स्वभाव से ही मनुष्यों और पशुओं का शत्रु है। कोई बहुत ही सौभाग्यशाली और पुण्यवान ऐसा हो सकता है जो शेर के सामने पहुँचकर सकुशल लौट सका हो। अधिकतर प्राणी प्राण गँवा बैठते हैं।

स्वामी राम तीर्थ और स्वामी विवेकानन्द दोनों के विषय में ही यह बात प्रसिद्ध रही है कि शेर भी उनके सामने बिल्ली बने रहते थे !

स्वामी रामतीर्थ के पीछे हजारों अंग्रेज श्रोता भाग पड़े

स्वामी रामतीर्थ महाराज टेहरी के अनुरोध और आग्रह पर जापान में होने वाले अन्तर्राष्ट्रीय धार्मिक सम्मेलन में भाग लेने वहाँ गये। वहाँ पर उनकी भेंट स्वामी पूर्ण सिंह से हुई जिनके साथ वे अमेरिका गये। अमेरिका में स्वामी राम के प्रवचनों का अपेक्षित प्रभाव पड़ा और मकी लोकप्रियता दिन-दिन बढ़ने लगी। अमेरिका प्रवास ने उन्हें अन्तराष्ट्रीय ख्याति का व्यक्तित्व बना दिया।

अमेरिका से ही उन्हें इङ्गलैण्ड जाने का निमन्त्रण मिला। लन्दन में उनके कई प्रभावशाल भाषण हुए। वहाँ पर एक सज्जन ने उनसे पूछा कि भगवान कृष्ण की बांसुरी की मधुर तान से किस प्रकार सैकड़ों गायें अपने शरीर को सुधि-बुधि खोकर उन्हें चारों ओर घेरे रहती थीं? स्वामी राम ने उत्तर दिया कि केवल सिद्धान्त की व्याख्या अपर्याप्त रहेगी। इसका कभी व्यावहारिक प्रदर्शन करके आपको दिखायेंगे।

एक बार लन्दन के एक प्रसिद्ध हॉल में प्रवचन चल रहा था। विषय रोचक था और स्वामी राम की व्याख्या का ढंग भी अनोखा था। लोग मन्त्र मुग्ध की तरह बैठे उनका प्रवचन सुन रहे थे हॉल में पूर्ण शान्ति थी। ऐसा लग रहा था जैसे श्रोताओं के शरीर बिल्कुल जड़ हो गये हैं। श्रोताओ की दृष्टि स्वामी राम पर थी और स्वामी राम स्थिर दृष्टि से श्रोताओं को देख रहे थे। वे त्राटक सिद्ध योगी थे। त्राटक उनकी प्रमुख साधना थी। स्वामी राम के सामने श्रोता पत्थर की मूर्तियों की तरह स्थित थे।

अकस्मात एक ऐसी घटना घटी जिसकी किसी को कल्पना भी नहीं थी। प्रवचन अभी काफी देर और चलना था परन्तु स्वामी राम उसे

बीच में ही छोड़कर बिना आयोजकों अथवा मंच के मध्यक्ष आदि किसी भी अधिकारी को सूचना दिये भागने लगे। अधिकारी वर्ग और श्रोता-गण आश्चर्य चकित थे। उससे पहले कोई उन्हें रोकने का प्रयत्न करे, वे हाल से बाहर निकल चुके थे और अब वह सड़क पर भाग रहे थे। श्रोता भी उनके पीछे भागने लगे। लन्दन के नागरिकों ने ऐसा दृश्य कभी देखा नहीं था कि एक भारतीय सन्यासी के पीछे सुसंस्कृत अंग्रेज कभी भागे हों। स्वामी जी और लन्दन की जनता दोनों बिना कारण के भागे जा रहे थे। काफी दूर जाने पर स्वामी जी रुके। लोगों ने पूछा कि प्रवचनको बीच में ही छोड़कर इस तरह भागने का कारण क्या है ? स्वामी राम ने उत्तर दिया कि एक भारतीय सन्यासी की वाणी और स्थिर दृष्टि ने लन्दन के प्रबुद्ध नागरिकों पर ऐसा जादू किया कि वे अपनी सुद्धि-बुद्धि खोकर उसके पीछे भागने लगे। तो क्या ऐसा नहीं हो सकता कि हजारों वर्षों से भारतीय आकाश पर नक्षत्र की तरह चमकने वाले और भगवान के रूप में पूजे जाने वाले भगवान कृष्ण की बांसुरी और प्रेम भरी दृष्टि से सात्विक प्रवृत्ति की गायें भागती भागती उनके पास आ जायें, उनके पीछे चलने लगें।

स्वामी रामतीर्थ की त्राटक सिद्धि को देखकर दर्शक चकित रह गये।

महर्षि रमण के आश्रम में हिंसक पशु भी अहिंसक बन गये थे

सबल प्राणी दुर्बल प्राणी को सदैव दबाता रहता है। प्राणी को प्राणी से ही भय है। चूहे को बिल्ली से, बिल्ली को कुत्ते से, कुत्ते को शृगाल से और शृगाल को सिंह से। तोता चिड़िया आदि पक्षियों को

हिंसा भी बन्दर, बिल्ली आदि को करते हुए देखा जाता है। कबूतर को भी बिल्ली से बड़ा भय रहता है।

इसी प्रकार सौम्य प्रकृति के मनुष्यों को क्रूर प्रकृति के मनुष्य सदा दबाते रहते हैं। सर्प आदि से भी मनुष्यादि प्राणियों को प्राणभय रहता ही है। अन्य भयों की अपेक्षा एक प्राणी के द्वारा दूसरे प्राणी के प्राणभय की घटनायें अधिक होती हैं।

किन्तु महर्षि रमण के आश्रम में इस प्रकार के भय का कोई वातावरण नहीं रहा। वहाँ बन्दर, बिल्ली, मोर, तोता आदि विभिन्न प्रकार के पशु-पक्षी परस्पर किसी से भी भय नहीं मानते थे, वरन् सभी पारस्परिक रूप से प्रेम का निर्वाह करते हुए एक साथ रहते थे। लगता था सभी में परम सद्भाव और आत्मीयता है। यह महर्षि रमण की योग-साधना का ही प्रभाव था। वे आकाश-त्राटक की साधना किया करते थे।

महात्मा गाँधी का वशीकरण

कुछ व्यक्तियों में त्राटक सिद्धि जैसी विशेषता सहज रूप से पाई जाती है। उनके सामने जाने पर मनुष्य, पशु, पक्षी, नाग आदि कोई भी हो, नत मस्तक हो जाता है। उनके विरोध करने का साहस ही नहीं जुटता। विरोधी भी पीछे से ही विरोध करते हैं, सामने जाकर विरोध नहीं कर पाते।

महात्मा गाँधी में भी ऐसी ही कुछ विशेषतायें थीं। उनका विरोधी भी सामने जाता तो झुक जाता था। उनके द्वारा की जाने वाली दैनिक प्रार्थना के विषय में तो सभी जानते हैं, किन्तु कुछ लोगों का अनुमान है कि गाँधीजी अपनी ध्यान-साधना के समय सम्भवत: त्राटक का अभ्यास भी करते हों।

और इस बात का अनुमान इससे भी लगाया जाता है कि गाँधीजी जिस कार्य को हाथ में उठाते, वह पूर्ण अवश्य होता था। भारत को स्वाधीनता की प्राप्ति उनकी बहुत बड़ी सिद्धि का प्रमाण है। उनके मित्र, अनुयायी आदि देश-विदेश सर्वत्र मिलते हैं। जो अनुयायी नहीं रहे, उनकी नीतियों के पक्ष में नहीं थे, वे भी उनकी प्रशंसा किया करते थे। आज भी विश्व महात्मा गाँधी को बड़ी श्रद्धा भावना के साथ याद करता है।

पाकिस्तान के प्रवर्तक मुहम्मद अली जिन्ना यद्यपि उनकी पूर्ण भारत की नीति के पक्ष में नहीं थे, वे भारत के बटवारे की बात पर तुले हुए थे, तथापि गाँधीजी के सामने आते ही मौन हो जाते थे। गाँधीजी से आँखें मिलने पर जिन्ना उनसे कुछ भी विरुद्ध बात कहने का साहस नहीं करते थे। यह बात दूसरी है कि उनके पीठ पीछे भी कहते हों।

भारत पर शासन करने वाले अंग्रेज वाइसराय भी उनका सम्मान करते और उनकी बातों को आदर सहित सुनते थे। ब्रिटेन के राजा आदि भी उनके प्रभाव को अस्वीकार नहीं कर पाते थे।

देश का बटवारा होने पर जब सर्वत्र साम्प्रदायिकता की आग फैली थी, तब इन महान् सन्त एवं मानवता के पुजारी के हृदय को बड़ी चोट पहुँची थी। फिर भी यह साहस करके उस समय बनने वाले पूर्वीय पाकिस्तान में स्वयं गये और सभी को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि जहाँ भयंकर जन संहार लीला के साथ मानवता की होली जल रही थी, वहाँ गाँधीजी के पहुँचने पर शीघ्र ही बहुत कुछ शान्ति हो गई थी।

रेत के चीनी बनने की अस्वाभाविक अप्राकृतिक व असाधारण घटना

मथुरा की बात है—घाटों के आगे बहुत दूर रेतीला टापू निकला हुआ था। यमुना का पानी टापू से आगे बढ़ गया था। कहते हैं कि उस टापू पर कभी-कभी कुछ सभाएँ और धर्म-उउत्सव भी होते रहते थे। गर्मी की ऋतु में बहुत-से स्त्री-पुरुष वहाँ घूमते और बैठे रहते।

इसी टापू पर कुछ साधु-सन्त भी आते-जाते रहते थे। कुछ साधु तो वहीं रहने भी लगे थे। एक बार एक साधु वहाँ आकर कुछ दिनों तक रहे और लोगों को सदाचार विषयक उपदेश देते तथा भगवान् के उच्च आदर्शों की गाथाएँ सुनाते। उनकी वाणी में ओज के साथ मधुरता भी थी। उनका कहना था कि 'मनुष्य को विषयों में ही नहीं फँसे रहना चाहिये, कभी भगवान् का भी भजन करना चाहिए।

लोग उनकी बातें बड़े ध्यान से सुनते! समाज में सभी प्रकार के मनुष्य होते हैं! सज्जन भी, धूर्त भी। धूर्तों को इसी में सुख मिलता है कि साधु-सन्तों के प्रति उपेक्षा और अनादर के भाव रखें। कुछ लोग अपनी चौथ पुजाने के अभिप्राय से भी उनका तिरस्कार करते हैं और चाहते हैं कि उन्हें कुछ न कुछ मिलता रहे।

ऐसी ही घटना उन साधुजी के साथ भी घटित हुई। एक धूर्त व्यक्ति ने उनके पास आकर कहा—'बाबा! तेरी कमाई बढ़ रही है, उसमें से कुछ हमें दिया कर, नहीं तो समझ ले ठीक नहीं होगा।'

साधु शान्त रहे, बोले—'भाई! तुम भ्रम में हो, मैं द्रव्य तो किसी से लेता ही नहीं, भोजन—वस्त्र शरीर की आवश्यकता है, वह यदि कोई दे जाता है तो स्वीकार कर लेता हूँ, माँगता किसी से नहीं।'

'बिना माँगे कोई नहीं देता, उस व्यक्ति ने कहा—'तेरे पास यह नया

कम्बल है, किसने दे दिया होगा असने आप लाकर ? अभी कल की ही तो बात है—ठाठ से जलेबियाँ उड़ा रहा था।'

साधु ने कहा—'पेट भरना, चाहे रोटी से हो, पूड़ी से, जलेबी से या फल-दूध आदि से हो। कुछ लोग मेवा भी दे जाते हैं, वह भी जरूरत होती है उतनी रख लेता हूँ।'

वह बोला—'तब तो साधु क्या स्वादु है तू। साधु कभी भी स्वादिष्ट पदार्थ नहीं खाते और रोटी भी उसी समय खाने योग्य रखते हैं, शेष बचे तो औरों को खिला देते हैं।

साधु बोले—'बचा कर तो मैं भी नहीं रखता, किन्तु खाने में पर-हेज नहीं करता किसी वस्तु से।'

उसने कहा—'तब तो माँस आदि अखाद्य वस्तुएँ भी खा लेता होगा ! बोले इससे अधिक पेटूपन क्या होगा।'

साधु ने समझाया—'भाई ! मैं मांस प्रभृति कोई अखाद्य वस्तु नहीं खाता। खाद्य वस्तुएँ भी मेरे लिए एक समान ही हैं। जैसी रोटी, वैसी मिठाई। जैसा चना, वैसी मेवा। स्वाद की दृष्टि से मैं कुछ भी नहीं खाता, जो कुछ खाता हूँ शरीर चलाने भर के लिये।'

धूर्त ने व्यंग में कहा—'तब तो यमुना जी रेती में और चीनी में भी भेद नहीं करता होगा ? क्या चीनी के स्थान पर रेती खा सकता है ?

साधु ने गम्भीरता से कहा—'अवश्य खा सकता हूँ। क्योंकि मेरे लिये तो यह रेत चीनी से भी अधिक पवित्र और मीठी है। ऐसे भाग्य कहाँ जो सदैव यह रेत खाने को मिल सकती हो।'

बातों में तो परास्त हो ही गया था वह धूर्त, इसलिये कुछ खिसिया कर आवेश में बोला—'तो खाकर दिखा यमुना की इस रेत को, तभी पता चलेगा कि ठीक कहता है या मिथ्या।

साधु बोले—'भाई ! तुम्हीं उठाकर रेत दे दो मुझे, यदि मैं स्वयं उठाकर खाने लगूँगा तो तुम उसमें भी कोई ट्रिक ही समझोगे। तुम्हारे विश्वास के लिए यह आवश्यक है तुम स्वयं ही उठा कर मुझे दो वह रेत और जो चाहते हो वह प्रत्यक्ष देखो।'

उस मनुष्य ने रेत का एक पस्स (मुट्ठी में आने योग्य ढेर) भर कर साधू को दिया। साधु ने उस पर दृष्टिपात किया, और बोले—'चाख कर देखो इसे।'

उस समय और भी कुछ लोग बैठे हुए उत्सुकता से देखने लगे कि रेत चीनी कैसे बनती है। तभी उन्होंने देखा कि रेत का रंग रूप ही बदल गया है। वही रेत साधु ने थोड़ी-थोड़ी सभी उपस्थित व्यक्तियों के हाथ में थमा दी। किन्तु कैसा आश्चर्य, रेत किसी के भी हाथ में न थी, बिल्कुल चीनी दिखाई देती थी।

साधु ने सभी से कहा—'यह भगवान् का प्रसाद हो गया है भाई ! अब इसे खाकर तो देखो।' साधु के आग्रह पर सभी ने उसे खाया और पाया कि उसमें चीनी जैसा ही मिठास है। साधु भी उस चीनी को मजे से खा रहा था।

धूर्त को उसकी धूर्तता का उत्तर मिल चुका था। उसने साधु के चरण पकड़ कर क्षमा-याचना की।

कोड़े मारने वाले को ही कोड़े लगने लगे

कहते हैं कि अब से कोई दो सौ वर्ष पहिले काशी में कोई बाबा कीनाराम हुए थे। उनकी सिद्धि से लोग बहुत प्रभावित थे। क्योंकि बाबा जब, जो कुछ कह देते वही होकर रहता।

वस्तुतः बाबा त्राटक सिद्ध योगी थे। कुछ लोग उन्हें तान्त्रिक कहते तो कुछ लोग जापक। किसी-किसी के विचार में बाबा मन्त्र शक्ति से

सम्पन्न थे। कुछ भी हो, सभी बाबा के प्रति अत्यन्त श्रद्धा भाव रखते ओर उनका निर्देश पालन करते थे।

एक बार बाबा किसी गाँव में जा रहे थे। जब बाबा वहाँ पहूँचे तब एक बुढ़िया को बहुत ही आर्त्त स्वर में रोते पाया। बाबा ने उससे कारण पूछा तो वह बोली—'इस गाँघ का जमींदार बड़ा क्रोधी और क्रूर है। पैसे में उसके प्राण बसे हैं, इसलिये किसी की विपत्ति पर भी ध्यान नहीं देता है वह। इस वर्ष सूखा पड़ने के कारण खेतों में अनाज का एक दाना भी नहीं हुआ, इसलिए मेरा पुत्र लगान का पैसा जमा नहीं कर सका है। जमींदार का नियम है कि जो पैसा जमा नहीं करता समय पर उसे निरन्तर कोड़े लगवाता है, जब तक कि वह मर न जाय। जमींदार के आदमी मेरे बेटे को पकड़े लिये जा रहे हैं, अब मैं क्या करूँ ? मेरा इकलौता पुत्र है, यदि यह मर गया तो सब प्रकार का सहारा ही समाप्त हो गया समझो। इसलिए बाबा ! आप कुछ उपाय कीजिये उसकी प्राण रक्षा के लिये।'

बाबा ने बुढ़िया को सान्त्वना दी और स्वय उस जमींदार के पास गये। पैसे का लोभी तथा बल मद में गर्वित जमींदार ने उनकी बात नहीं मानी और बोला—'साधु बाबा ! इन पचड़ों में पड़ कर तुम क्या लोगे ? अपना भजन करो। यह तो संसार है इसी प्रकार चलता रहेगा।'

बाबा ने उसे दुबारा समझाया तो वह झल्ला गया और क्रोध पूर्वक बोला—'मेरे न्याय में बोलने की तुम्हें जरूरत नहीं है, जाओ, अपना काम देखो।'

लड़के को कोड़े लगना आरम्भ किया गया। उसे देखने के लिये स्त्री-पुरुषों की भीड़ एकत्र हो चुकी थी। सभी भयभीत हुए दया पूर्ण नेत्रों से देखते हुए भी कुछ करने में असमर्थ थे। बाबा भी उस समय वहाँ उपस्थित थे।

कोड़ा मारने वाले ने मारना आरम्भ किया। वावा ने उसके हाथ पर दृष्टिपात दिया। कोड़ा लगा तो लड़के के शरीर पर, किन्तु पीड़ित हुआ पिटवाने वाला। कोड़ा मारने वाले ने दूसरा कोड़ा और मारा तो जमीदार चीख उठा—'रोको।' तव तक तीसरा कोड़ा और लग चुका था। जमींदार का बुरा हाल था और लड़का भला चंगा। सभी इस दृश्य को आश्चर्य से देख रहे थे।

जमींदार उठा, उसने लड़के को तुरन्त छोड़ देने का आदेश दिया और स्वयं वावा के पास पहुँच कर उनके चरणों में झुक गया। वावा ने उसे क्षमा करते हुए कहा—'यह माया तो आने-जाने वाली है, दीन-दुखियों का ध्यान रखा करो।'

चक्कियाँ स्वयं आटा पीसने लगीं

इन्हीं वावा कीनाराम की वात है यह। वे एक बार जूनागढ़ गये थे। वहाँ के नवाव का आदेश था कि जूनागढ़ में कभी कोई साधु भिक्षा न माँगे। वावा को इस आदेश का ज्ञान नहीं था। इसलिए वे नगर में भिक्षा माँगने लगे। अधिकारियों ने आज्ञा उल्लंघन के अपराध में वावा को कारागार में डाल दिया।

जेल में अनेक अपराधियों से चक्की पिसवाई जाती थी। वावा को भी चक्की पीसने का आदेश हुआ तो उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा 'हम संन्यासी हैं, चक्की पीसना हमारा काम नहीं है।'

अधिकारी के दुबारा कहने पर भी जव वावा ने चक्की पीसना स्वीकार न किया तो उसने क्रोध में भर कर वावा पर एक लात का प्रहार किया। किन्तु सभी कैदियों ने आश्चर्य से देखा कि उसकी लात वावा के न लग कर चक्की के पत्थर पर जोर से लगी, जिससे अधिकारी के पाँव में गम्भीर चोट आ गई।

इसके बाद बाबा ने कुछ समय तक गम्भीरता पूर्वक एक चक्की पर दृष्टिपात किया और अन्य कैदियों से कहा—'तुम भी चक्की मत चलाओ, सभी चक्कियाँ स्वयं चलेंगी।' बस बाबा का इतना कहना था कि सभी चक्कियाँ स्वतः चलने लगीं। उनमें स्वतः ही अनाज पड़ रहा था और पिस कर बाहर निकल रहा था। यह देख कर सभी का आश्चर्य प्रबल हो गया।

नवाब को जब बाबा के इस चमत्कार का पता चला तो वे स्वयं जेल में गये। उनके आने पर भी सभी चक्कियाँ स्वतः चल रही थीं, कोई भी कैदी उन्हें हाथ तक नहीं लगा रहा था, वरन् सभी दूर खड़े हुए इस अद्भुत दृश्य को देख रहे थे। नवाब ने बाबा से क्षमा माँगी और फिर वह कानून ही समाप्त कर दिया।

परकाया प्रवेश द्वारा रूप-परिवर्तन

लगभग सौ वर्ष हो चुके होंगे हरिहर बाबा को। वे राम टेकरी के नीचे वाले एक घने जंगल में वट वृक्ष के नीचे रह कर साधना किया करते। उस जंगल में अनेकों जंगली सुअर, शृगाल, रीछ तथा कई प्रकार के हिंसक पशु रहते थे, जो चाहे जब बाबा के निकट आकर बैठ जाते और बिना कुछ कहे चुपचाप ही खिसक जाते थे। बाबा के जो भक्त उनके दर्शनार्थ आते थे, उन पर भी किसी पशु ने कभी कोई आक्रमण नहीं किया और न भय ही दिखाया। सभी व्यक्ति अकेले-दुकेले, चाहे जब निर्भय रह कर उस मार्ग पर आते-जाते रहते थे। इससे स्पष्ट था कि बाबा का सान्निध्य पाकर सभी हिंसक जीव अहिंसक हो गये थे।

उस जंगल में कई मील तक पानी के दर्शन भी नहीं थे, किन्तु बाबा के पास जो घड़ा था, उसमें सदैव शीतल, स्वादिष्ट पानी

रहता था। आने वाले भक्तगण पानी पीते, तो भी घड़ा खाली नहीं होता था।

बाबा किसी की कोई भी वस्तु स्वीकार नहीं करते थे। यदि कोई लाता भी तो लौटा देते और कह देते कि 'भाई ! व्यर्थ कष्ट करने की आवश्यकता नही है, मुझे किसी का अन्न नहीं चाहिये, भगवान् स्वयं ही तृप्त कर देते है।'

किसी ने नहीं देखा बाबा को कहीं से खाद्यान्न प्राप्त करते या बनाते-खाते। कोई नहीं जानता था कि वे कहाँ, कब, किस प्रकार से अपनी उदर-पूर्ति करते हैं।

वे किसी को शिष्य नहीं बनाते थे। कभी कोई आता भी तो उसे स्नेह पूर्वक इंकार कर देते थे। एक बार, एक अनधिकारी व्यक्ति उनका शिष्य बनने की इच्छा से आया, बाबा ने उसे इंकार कर दिया तो भी उसने आना न छोड़ा, तब बाबा ने एक जंगली सुअर की काया में प्रविष्ट होकर उस व्यक्ति को आगे बढ़ने से रोका और फिर उसे जंगल से बाहर तक खदेड़ दिया। इस घटना के बाद उसको पुनः कभी बाबा के पास आने का साहस नहीं हुआ।

वैसे, बाबा ने अनेकों रोगियों के रोग दूर कर उन्हें स्वास्थ्य प्रदान किया। अनेकों नेत्रहीनों को नेत्र प्राप्त कराये। यह सब सामर्थ्य उन्हें गायत्री मन्त्र के जप और त्राटक-साधना के फल स्वरूप प्राप्त हुई थी। बाबा जिसकी ओर देखते वही उनका अनुयायी बन जाता था।

बाबा ने रेलगाड़ी को स्तम्भित कर दिया

नीम करौली नाम से प्रसिद्ध एक सन्त बाबा हुए हैं। इनके चमत्कारों को श्री के. एम. मुंशी, डॉ सम्पूर्णानन्द, डॉ. शंकरदयाल शर्मा आदि स्वयं देखकर आश्चर्यचकित हो चुके थे। यह बाबा अत्यन्त फक्कड़

तथा मस्त सन्त थे। अधिकतर नैनीताल के कैंची नामक रमणीक स्थान के निकट रहा करते थे। जहाँ उन्होंने हनुमानजी का एक भव्य मन्दिर भी बनवाया हुआ था।

कहते हैं कि बाबा के दर्शनों को बड़े-बड़े राजे-महाराजे तथा पदाधिकारी पुरुष आते ही रहते थे। उनके स्थानपर प्रातःकाल से सायंकाल पर्यन्त भण्डारा चलता ही रहता था। नित्य प्रति सैंकड़ों गृहस्थ और साधु-सन्त भी उनके दर्शनार्थ आया करते थे।

बाबा कभी-कभी रेलयात्रा भी करते थे। किन्तु टिकट नहीं लेते एक बार. जब वे रेल में यात्रा कर रहे थे तब टिकट निरीक्षक ने उनसे टिकट माँगा। बाबा के पास टिकट था ही नहीं, इसलिये उन्होंने स्पष्ट बता दिया कि नहीं है टिकट।

टिकट निरीक्षक ने कहा पैसा लाओ या उतरो गाड़ी से। बाबा ने कहा कि 'हम फक्कड़ हैं, टिकट उकट लेने के लिये न तो पैसा ही हैं, न ध्यान ही रहता है उसका।' किन्तु निरीक्षक कब मानने वाला था। उसने कहा— टिकट नहीं है तो उतर क्यों नहीं जाते, व्यर्थ माथा-पच्ची करते हो?'

बाबा भी कुछ रुष्ट हो गये, बोले—'नहीं मानता है तो हम तो उतरे जाते हैं, पर ध्यान रख, अब तेरी रेलगाड़ी ही नहीं चलेगी।

निरीक्षक ने क्रोध पूर्वक—'अरे बहुत देखे हैं तेरे जैसे साधु-सन्त। पैसा नहीं है तो पैदल क्यों नहीं चलते, बेकार परेशान करते हैं रेलवे स्टाफ को और जगह घेरते हैं।'

बाबा उतर गये। इंजिन ने सीटी दी, किन्तु.सीटी देकर ही रह गया। ड्राइवर ने लाख प्रयत्न किया उसे चलाने का, किन्तु बाबा के दृष्टिपात ने एकदम चक्का जामकर दिया था। इसलिये वह जहाँ खड़ी थी, वहाँ से हिल भी नहीं सकी।

अब तो, सभी की समझ आगया कि वावा की करामात है यह। निरीक्षक, गार्ड तथा स्टेशन मास्टर सभी ने बावा के चरण पकड़ कर क्षमा-याचना की और आग्रह पूर्वक उन्हें रेलगाड़ी में बैठाला, बस, बावा के बैठते ही गाड़ी चल पड़ी।

सूखा वृक्ष हरा हो गया

एक स्थान पर एक महात्मा रहते थे, जो केवल दूध का ही भोजन करते थे। दूध के अतिरिक्त अन्य कुछ भी ग्रहण न करने के कारण उनका नाम दुग्धाहारी हो गया, किन्तु बोल चाल की सुविधानुसार सभी उन्हें दूधाधारी कहते थे।

बावा बहुत चमत्कारी पुरुष थे। कहते हैं कि उनका स्थान मथुरा से उत्तर की ओर कुछ हटकर, यमुना के किनारे एक टीले पर था। उनके बहुत से भक्त थे, जिनमें से कुछ का कहना था कि बावा की दृष्टि में ही शाप और वरदान है। वे किसी को गाली नहीं देते और न किसी को आशीर्वाद ही। यदि दृष्टि प्रसन्न हो, मुख पर मुसकान दिखाई दे तो समझलो शुभ होने वाला है। यदि दृष्टि में रोष दिखाई दे तो उसी को शाप समझ लेना चाहिए।

एक दिन मजे की बात यह हुई बताई जाती है कि बावा के स्थान से कुछ ही दूर, मैदान में पीपल का एक वृक्ष था। उसके द्वारा मार्ग चलने वालों की धूप, वर्षा आदि से भी रक्षा होती थी। कहते हैं कि निकट में ही श्मशान था उस समय, इसलिये शवयात्रा में भाग लेने वाले व्यक्ति भी उस वृक्ष के नीचे विश्राम किया करते थे।

किन्तु समय की बात, वृक्ष पुराना था ही, धीरे-धीरे सूखकर ठूँठ हुआ जा रहा था लोगों ने उस दिन बावा से निवेदन किया कि 'आपके

द्वार पर खड़ा हुआ वह द्वारपाल मरने जा रहा है बाबा ! उसकी रक्षा कीजिये ।'

बाबा समझ गये कि यह लोग उसी पीपल की बात कह रहे हैं। बोले—'उसकी श्वासें पूरी होने जा रही हैं तो मरने में आश्चर्य ही क्या ? भई ! श्वासें पूरी होने पर तो सभी मरते है, फिर भी तुम चाहते हो कि वह जीवित रहे ?'

यह कह कर बाबा ने वहीं से मैदान में स्थित उस पीपल वृक्ष पर दृष्टिपात किया और बोले—'तुम सभी की इच्छा थी कि उसकी आयु बढ़ जाय, इसलिये बढ़ गई उसकी आयु । अब बहुत दिनों तक जीविन रहेगा वह ।'

लोगों ने बाबा का वरदान मात्र समझा यह, जो आगे चल कर उसे नष्ट होने से बचा दे। किन्तु कुछ लोगों ने वहाँ जाकर उसी समय देखा कि वृक्ष तो पूण रूप से हरा-भरा है, मानो कायापलट ही हो गई हो ।

दूसरों के मन की बातें जान लेने की सत्य प्रक्रिया

त्राटक-सिद्धि के बल पर दूसरों के मन की बातें जान लेना सहज होता है। गोवर्धन के पास एक बाबा रहते थे जो दूसरों के मन की बात जान लेते थे । कहा जाता है कि जो कोई उनसे कुछ प्रश्न करना चाहता, उस प्रश्न को वे पहिले ही बता देते और साथ ही उसका उत्तर भी दे दिया करते थे ।

एक बार एक व्यक्ति ने उनकी परीक्षा लेनी चाही । उसे विश्वास ही नहीं हुआ कि बाबा में ऐसी शक्ति है, अत: वह उनके पास जाकर बैठ गया । बाबा ने बहुत देर तक उसकी ओर ध्यान ही नहीं दिया, अपनी साधना में लगे रहे । उस मनुष्य ने सोचा कि बाबा शायद मेरी

उपेक्षा कर रहे हैं तो कुछ रुष्ट-सा होकर बोला—'बाबा ! मैं कुछ पूछना चाहता हूँ।'

वे बोले—'मैं समझ रहा हूँ तेरा अभिप्राय, तू मेरी परीक्षा लेना चाहता है न ! तो समझले कि साधु-सन्त निर्लिप्त होते हैं, वे न परीक्षा देते हैं, न लेते हैं। फिर भी तेरी इच्छा परीक्षा की ही है तो सुन, अब पहिले मानसी गंगा में स्नान करेगा, मगर सावधानी से करना स्नान।'

उसने कहा—'मैं तो राधाकुण्ड की परिक्रमा देता हुआ वहीं स्नान करूँगा। मानसी गंगा में इस समय स्नान करने का कोई प्रश्न ही नहीं है।'

बाबा ने कहा—'प्रश्न हो या न हो, तू मानसी गंगा में ही स्नान करेगा और राधाकुण्ड की परिक्रमा देगा शाम को, तथा एक बात और सुन ले राधाकुण्ड में स्नान नहीं करेगा आज।'

उसने सोचा बाबा की भविष्य वाणीं सच्ची नहीं, वह अवश्य ही राधाकुण्ड पहुँचेगा अभी और वहीं स्नान करेगा। ऐसा निश्चय कर वह वहाँ से चल दिया। उसके कुछ साथी थोड़ी दूर पर ही बैठे थे। उनमें से एक के पेट में बड़े जोर का दर्द हुआ। वह व्यक्ति बिल्कुल पसीने-पसीने हो गया। लगता था कि उसकी स्थिति गम्भीर होती जा रही है, अतः यह आवश्यक समझा गया कि उसे तुरन्त ही गोवर्धन ले जाया जाय।

सभी को एक मत होना पड़ा। रोगी के साथ सभी गोवर्धन लौटे और वहाँ किसी चिकित्सक से उपचार कराया। रोगी एक घंटे भर में ठीक हो गया। अब, शौचादि से निवृत्ति होकर सब मानसी गंगा पहुँचे। एक एकान्त घाट पर गये जहाँ सीढ़ियों पर बहुत काई थी। स्नान करते समय उस व्यक्ति का पाँव फिसल गया जिसे बाबा ने सावधानी से स्नान करने की चेतावनी दी थी। वह तो, उसके दो साथियों ने उसे बचा लिया, नहीं तो गहरे में पहुँच सकता था।

सायंकाल राधाकुण्ड की परिक्रमा को गये। राधाकुण्ड पहुँचते-पहुँचते वर्षा आ गई, ऋतु की प्रतिकूलता के कारण वहाँ कोई स्नान न कर सका। बाबा की परीक्षा करने वाला व्यक्ति बहुत चाह कर भी बाबा की भविष्य वाणीको मिथ्या नहीं कर सका। इसलिये उसने समझ लिया कि सिद्ध पुरुषों से कभी विवाद न करना ही श्रेयस्कर होता है।

इस प्रकार का एक साधु. एकबार गढ़ मुक्तेश्वर में भी मिला था। कार्तिकी पूर्णिमा का मेला लगा था गंगा तट पर। एक स्थान पर एक साधु बैठा था, जिसके पास कुछ अन्य व्यक्ति भी थे। लोग साधु से बहुत ही विनम्रता से बातें कर रहे थे। उनमें से एक स्त्री-पुरुष उठ कर, प्रमाण कर चलने को हुए, तभी उन्होंने साधुजी को कुछ भेंट देनी चाही, किन्तु उन्होंने उसे स्वीकार नहीं किया। बोले—'सभी भक्तजन सुन लें, मुझे कुछ नहीं चाहिये, मेरी भेंट यही है कि आप सब लोग परमात्मा पर विश्वास करें और भगवान् कृष्ण की प्रतिमा के कुछ देर स्थिर दृष्टि से दर्शन अवश्य किया करें। बस इसी में कल्याण निहित है।'

पूछने पर एक भक्त ने बताया कि यह साधु प्रश्न करने से पहिले ही प्रश्न और उत्तर दोनों ही बता देते हैं। कोई कुछ देना चाहे तो लेते नहीं, केवल दोपहर में, कोई लाये तो तीन रोटियाँ स्वीकार करते हैं। सभी को उपदेश देते हैं कि भगवान् कृष्ण के चित्र अथवा मूर्ति का पूजन करो और उस छवि को हृदय में बसा लो, बस कुछ देर एकटक स्थिर दृष्टि से देखने का अभ्यास करो, भगवान् की छवि को। कुछ ही दिन में पाओगे कि कुछ विचित्रता भर गई तुम में।

मूर्ख व्यक्ति में बुद्धि का असाधारण विकास

प्रयाग के कुम्भ में बहुत से साधु-संन्यासी संगम के निकट ही निवास करते हैं। उनके पास भक्तों की भीड़ भी रहती ही है। अनेक श्रद्धालु

व्यक्ति उन्हें भोजन, वस्त्र, रुपया-पैसा, पुस्तक आदि देते रहते हैं। कुछ साधु प्रवचन भी करते हैं, कुछ वैसे ही वार्तालाप द्वारा धर्म-विषयक शंकाओं के समाधान में लगे रहते हैं। कुछ साधुओं का उद्देश्य विभिन्न प्रकार से लोक-कल्याण का प्रयत्न करते रहना होता है। कुछ साधु रोगियों के लिये औषधि आदि भी बताते हैं। कुछ अपने भक्तों की धन, स्त्री, स्थान-परिवर्तन आदि की कामनाओं की पूर्ति का उपाय भी करते हैं। किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि किसके द्वारा कितना लाभ पहुँचता है मनुष्यों को।

एक साधु प्रातःकाल उठते और खुले नेत्रों से नासाग्र पर दृष्टि टिका कर ही साधना करते। सूर्योदय होने तक ही उनकी वह साधना चलती थी। उनके विषय में कहा जाता था कि जिस पर दृष्टिपात करें उसी की कामना पूरी कर दें, ऐसी शक्ति है उनके पास। अनेक भक्तजन आते भी थे इसी उद्देश्य से।

एक बार, एक स्त्री-पुरुष आये उनके साथ एक दस-ग्यारह वर्ष का लड़का भी था। उनका कहना था कि 'लड़का बहुत ही मूर्ख है, पढ़ने-लिखने में इतना कमजोर कि इस आयु में भी आरम्भिक कक्षा से आगे नहीं बढ़ सका है। कोई काम कराओ तो वह भी नहीं हो पाता इससे। अच्छी बात कहो तो बुरी लगती है इसे। समझ में नहीं आता कि क्या करें ?'

साधु ने उस लड़के को अपने सामने बैठाया और बोले उससे—'मेरी ओर देख' लड़के ने उनकी ओर देखा तो उन्होंने उसकी आँखों में आँखें टिका दीं। लगभग दस मिनट देखते रहे होंगे उसे और एक पुस्तक देकर बोले—'इसे जितना पढ़-समझ सको, उतना प्रयत्न करना और कल फिर आना।'

दूसरे दिन बालक पुनः लाया गया, साधु ने उसे इस दिन भी दस

मिनट को सामने बैठाने का प्रयोग किया और फिर पूछा उससे—'कल वाली पुस्तक पढ़ी थी ?'

उसने उत्तर दिया—'जी, पढ़ी थी, यहाँ भी लाया हूँ।'

साधु ने कहा—'पढ़ो मेरे सामने।'

बालक ने पुस्तक को पढ़ा तो ऐसा लगा कि वह उस पुस्तक को पढ़ने में असफल नहीं है। उन्होंने तीसरे दिन पुनः आने को कहा। इस बार भी उसी प्रयोग की पुनरावृत्ति की गई। फिर एक सप्ताह बाद आने का निर्देश दिया।

एक सप्ताह में उसकी बुद्धि में आश्चर्य जनक रूप से प्रखरता आ गई थी। अब उसकी बातें भी समझदार व्यक्ति जैसी होती थी। एक सप्ताह में पहुँचने पर साधु ने वही प्रयोग पुनः किया और फिर बोले—'अब इसकी योग्यता बहुत बढ़ गई है। आगे चल कर यह एक अच्छा विद्वान् बनेगा।'

विशालकाय वृक्ष गिर गया

एक बाबा थे नित्यानन्द। कहते हैं वे सदा प्रसन्न रहते और उनके मुख पर मुसकान खेलती रहती, उन्हें कभी क्रोध करते हुए देखा ही नहीं गया। लोगों का मन था कि बाबा बहुत चमत्कारी पुरुष हैं, किन्तु साधारण साधु के समान रहते और नित्य प्रति तीन घरों से एक-एक रोटी माँग कर लाते थे। किसी भी घर से एक रोटी से अधिक ग्रहण नहीं करते थे और तीन घरों के द्वार पर जाते अवश्य थे, चाहे रोटी मिले या न मिले। तीन से अधिक घर में नहीं जाते थे और नित्य प्रति अन्यान्य घरों में जाते थे। ऐसा नहीं कि नित्य प्रति उन्हीं तीन घरों से रोटी प्राप्त करें।

एक दिन वे एक ऐसे घर के द्वार पर पहुँचे, जिसके बाह्य भाग में

एक विशाल काय पुराना वृक्ष था। लोग बाबा को सिद्ध पुरुष तो समझते ही थे, एक मनचले लड़के ने उनसे कह दिया—'बाबा ! आज तो कुछ चमत्कार दिखाओं।'

नित्यानन्द ने समझाया उसे—'वत्स ! चमत्कार हानिप्रद भी हो जाते हैं कभी-कभी। इसलिये जहाँ तक हो चमत्कारों के देखने-दिखाने से बचना ही चाहिये।'

वह व्यक्ति हठ पकड़ गया—'कुछ भी हो, आज तो दिखाना ही होगा चमत्कार, वरन् जाने नहीं देंगे तुम्हें।'

उन्होंने पूछा—'अच्छा क्या देखना चाहता है ?'

वह बोला—'जो तुम दिखा दो, दिखाओ जल्दी, देर मत करो।'

बाबा ने कहा—'मेरी तो समझ में नहीं आरही कि तुझे क्या दिखाऊँ ? संसार में जो कुछ भी दिखाई दे रहा है, सभी कुछ चमत्कार है प्रकृति का। प्रकृति के चमत्कार से बढ़कर और कौन-सा चमत्कार हो सकता है ?'

उस मनचले ने बाबाबा की बात पर ध्यान न दिया, बोला—'अच्छा, इस पेड़ पर जो फल लदे हैं, वे सभी फल अपने आप नीचे आ गिरें, इसी समय। इतना ही करके दिखा दो।'

बाबा ने कहा—'अरे, तू फल की बात कहता है, तू कहे तो समूचा पेड़ ही आगिरे धरती पर।'

वह बोला—'वाह, वाह, फिर तो मजा आ जायगा। इस पेड़ से बहुत जगह घिरी हुई है, रास्ता रोके खड़ा है बीच में, इसके फल भी खाने के योग्य नहीं हैं। हाँ छाया अवश्य होती है कुछ। हमारे पिताजी आदि इसे हटाना चाहते हैं यहाँ से, किन्तु कटवाने में पाप के डर से छोड़ देते हैं।'

घर के और लोगों ने भी बाबाजी से कहा कि उस पेड़ को गिरा दें तो हम बड़े अनुग्रहीत होंगे। किन्तु बाबा ने सोचा कि 'ऐसा करने

से वृक्ष का जीवन ही समाप्त हो जायगा, जिसे करने का मुझे अधिकार नहीं है।' इसलिए उन्होंने बात टालने का प्रयत्न किया।

पर, अब तो बात निकल चुकी थी मुख से, लोग पीछे पड़ गये तो बाबा को स्वीकार करना पड़ा उनका आग्रह बोले 'अच्छा, तो सभी हट जाओ इस वृक्ष की परिधि से।'

सभी वहाँ से दूर जा खड़े हुए। बाबा ने एक स्थान पर खड़े होकर वृक्ष की ओर टकटकी लगा कर देखा, पहिले तो वृक्ष कुछ काँपा और फिर धीरे-धीरे धरती की ओर झुकता हुआ जड़ सहित आ गिरा। यह देख कर सभी बाबाजी का आभार मानने लगे।

किन्तु बाबाजी का मन ग्लानि से भर उठा। उनका मन कहता था कि वृक्ष को गिराकर उन्होंने कुछ ठीक कार्य नहीं किया। वे तुरन्त वहाँ से चले गये और आश्चर्य कि फिर कभी किसी ने उन बाबाजी को नहीं देखा। पता नहीं, वे कब, किस ओर चले गये। उनके चले जाने का सभी ग्राम वासियों को बड़ा दुःख था। क्योंकि वे जब तक गाँव के निकट रहे तब तक पूरा गाँव सुखी था।

घनघोर वर्षा रुक गई

बात कुछ पुरानी हो चुकी है। एक वयोवृद्ध सज्जन पुरुष का कहना था कि सभी कुछ उन्होंने अपनी आँख से देखा था। एक बाबाजी यमुना के पार आकर रेल पुल के परली ओर ठहर गये। बाबाओं के प्रति लोगों के मन में भक्ति तो रहती ही है, इसलिए भक्त लोगों का आना-जाना भी आरम्भ हो जाता है उनके पास।

कुछ लोगों ने उनसे नाम-धाम पूछा तो बोले—'नाम तो अनाम हमारा और धाम का स्वयं हमें ही पता नहीं कि किधर से आये

किधर जाँयगे। चलते पानी और रमते राम की यही स्थिति होती है भैया।'

और इसीलिए लोग उन्हें 'अनाम बाबा' कहने लगे। उनका व्यवहार लोगों के प्रति बहुत उदारता पूर्ण था और वे रोग-शमनार्थ जड़ी-बूटियाँ भी बाँटते थे, किन्तु स्त्रियों से सदा दूर रहते। उनका कहना था कि 'वैसे तो स्त्रियाँ भी परमात्मा का ही अंश हैं, किन्तु लौकिक शरीर तो विकारी है, उसका सान्निध्य पाकर मन भी विकारी हो जाता है। इसलिये स्त्री और पुरुष का मिलना-जुलना आग-फूँस के समान है, गृहस्थों के लिये ही यह उचित है, संन्यासियों के लिये नहीं।' फिर भी वे पुरुषों के द्वारा प्राप्त हाल के अनुसार उनके लिये भी जड़ी-बूटी की व्यवस्था कर दिया करते थे।

बाबा को चातुर्मास व्यतीत करने थे। उस वर्ष वर्षा भी बड़े जोर की पड़ी थी। बाबा जी के पास एक बड़ा छाता था, किन्तु वह वर्षा से बचाव करने में असमर्थ था। उनके लिए वह वर्षा कुछ असह्य-सी प्रतीत होने लगी।

इधर ग्रामीण लोग भी उस वर्षा से परेशान थे। उन्हें यह भी खतरा था कि उनकी झोंपड़ियाँ और कच्चे मकान कहीं गिर न जाँय। उनमें से भी कुछ ग्रामीण भक्त बाबाजी के पास पहुँचे और अतिवृष्टि के विषय में वार्तालाप करने लगे। तभी बाबाजी के मुख से निकला—'बस अब रुक जायेगी वर्षा।'

वे लोग बादल की स्थिति से जानकार थे, ऊपर की ओर देख कर बोले—'बाबा! आपका ख्याल गलत है। आकाश पर तो घनघोर बादल छाये हुए हैं, इसलिए इसके रुकने के कुछ भी आसार नजर नहीं आते। लगता है कि यह अभी दो दिनों तक तो रुकेगा नहीं, कम या अधिक बरसता ही रहेगा।'

बाबा ने कहा—'यही तो फर्क है दृष्टि का भई ! इस वर्षा को तो अभी ही रुक जाना है और अब रुकी तो रुकी, फिर जरूरत होने पर ही आयेगी, पहिले नहीं ।'

ग्रामीण भक्त हँस पड़े बाबा की बात पर। बोले—'बाबा ! क्या कहते हो ? यह वर्षा नहीं रुकेगी अभी ।'

तभी बाबा ने आकाश की ओर तीव्र दृष्टि डाली और स्थिरता पूर्वक देखते ही रहे कुछ मिनटों तक उन भक्तों को यह देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ कि वर्षा रुक गई और बादल धीरे-धीरे छितरा कर पूर्ण रूप से फट गये ।

बाबाजी सर्वत्र चर्चा के विषय बन गये। वर्षा गई तो चली ही गई। जिसने उनका प्रताप जाना, वही दर्शनार्थ आने लगा। कुछ दिनों में ही भक्तों की भारी संख्या हो गई। फिर चौमासा समाप्त होने पर बाबाजी किसी एक दिन प्रातःकाल होने से पहिले ही कहीं चले गये. यह जान कर लोगों की बड़ी निराशा हुई ।

अनावृष्टि से रक्षा

वही बाबाजी तीन वर्ष बाद पुनः चातुर्मास व्यतीत करने के लिये उसी स्थान पर ठहरे। धीरे-धीरे लोगों को मालुम हो गया कि वही बाबाजी आये हुए हैं, जिन्होंने पहिले अतिवृष्टि वाली वर्षा कुछ ही मिनटों में रोक दी थी। इसलिए लोगों को उनके आने से बहुत प्रसन्नता हुई ।

किन्तु इस बार वर्षा का समय ही निकला जा रहा था, पानी की बूँद भी नहीं, सर्वत्र सूखा ही सूखा। बड़ी बुरी स्थिति समझी जा रही थी। नदी-तालाबों में भी पानी बहुत कम था। अधिकांश ताल-तलैया तो बिल्कुल ही सूख गये थे ।

लोगों ने बाबा जी से अपना रोना रोया । वर्षा के बिना बाबाजी को भी आनन्द नहीं आ रहा था । यमुना सुहावना तट, इस समय विपरीत प्रतीत होने लगा । उन्होंने सबको सान्त्वना दी—'आज वर्षा अवश्य होगी, अभी थोड़ी ही देर में ।'

लोग उनकी करामात पहिले देख चुके थे, इसलिए अविश्वास या आश्चर्य का कोई कारण नहीं था । बाबाजी ने आकाश की ओर एकटक देखा, तभी धीरे-धीरे बादल एकत्र होने लगे और लोगों ने देखा कि कुछ ही देर में जोरदार वर्षा होने लगी ।

महात्मा द्वारा शेर, चीते की सवारी

पुराणों के अनुसार भगवती दुर्गा का वाहन है शेर । बेचारे सामान्य मनुष्य की क्या बिसात कि शेर जैसे भयंकर एवं क्रूर पशु की सवारी कर सके ।

किन्तु साधु-सन्त भी इसमें सामर्थ्यवान पाये गये हैं । कुछ साधुओं के पास शेर, चीते पालतू कुत्ते के समान रहते हैं और उनके भक्तों से भी कभी कुछ नहीं कहते ।

अभी हाल में धर्मयुग में तिलिस्मी किलों के विषय में एक लेख छपा, जिसके अनुसाह मिरजापुर में तिलिस्मी किलों की भरमार है । मिरजापुर जिले की उत्तरी सींमा पर वाराणसी जिला आता है, जिसमें चकिया और नौगढ़ क्षेत्र है, जहाँ अनेक खोह-कन्दराएँ विद्यमान हैं तथा उन खोह-कन्दराओं के विषय में बहुत-सी किम्वदन्तियां भी सुनी जाती हैं ।

कहते हैं कि वहीं कभी एक पहुँचे हुए महात्मा भी थे, जो सैकड़ों वर्षों से एक गुफा में रहते चले आते थे । उनके आस-पास बहुत-से शेर,

चीते और भालू घूमते रहते थे तथा वे महात्मा शेर, चीते आदि की सवारी भी किया करते थे।

आज-कल भी, कुछ साधु-सन्त शेर, चीते आदि से भय नहीं मानते। एक साधु के विषय में यह बात बहुत लोगों ने बताई कि उनके पास दो शेर हैं, जिन्हें वे अपने इधर-उधर बैठा लेते और अपनी हथेलियाँ उन पर रख लेते हैं कभी-कभी वे उन शेरों की पीठ और सिर को सहलाते भी हैं।

यह त्राटक साधना का ही चमत्कार बताया गया है।

और कुछ दिन पहिले समाचार पत्रों में एक रूसी दम्पत्ति के शेर पालने की बात भी पढने को मिली थी। उनका वह शेर मकान के बाहरी भाग में ही खुला पड़ा रहता और उनके बच्चे कभी उसके कानों को ऐंठते, कभी उसके शरीर पर चढ़ते-कूदते थे। रूसी गृहिणी भी उससे पालतू कुत्ते जैसा ही व्यवहार करती थी, तथा गृहपति तो उसके गले में जंजीर बाँध कर अपने साथ टहलने ले जाते थे।

उक्त चर्चा तब छपी, जब एक भारतीय सज्जन उन रूसी गृहस्थी से मिलने के लिये उनके मकान पर पहुँचे। उन्होंने जैसे ही भीतर प्रवेश किया, वैसे ही शेर पर दृष्टि पड़ी और वे भयभीत हो गये थे।

वशीकरण एक साधारण प्रक्रिया प्रतीत होती है।

एक व्यक्ति के विषय में कहा जाता है कि वह इच्छानुसार चाहे जब, चाहे जिस स्त्री, पुरुष, बालक आदि का वशीकरण करने में समर्थ है। उसने वह विद्या एक साधु से प्राप्त की थी और उसमें उसे कभी न असफलता हुई हो, ऐसी बात नहीं सुनी गई।

जिस साधु से उसे यह विद्या मिली,वह त्राटक योग का साधन किया करता था। इस व्यक्ति को भी उसने त्राटक-साधना का ही अभ्यास आरम्भ में कराया था। जब वह उसमें अभ्यस्त हो गया, तब उसने एक व्यक्ति पर उसकी परीक्षा की। वह उससे अपना एक काम लेना चाहता था। यह उस व्यक्ति के पास पहुँचा और उसके मुख पर दृष्टि स्थिर रखते हुए ही अपने काम के विषय में बात की। इस बीच में एक बार उससे दृष्टि चार हो गई बस दृष्टि मिलते ही काम बन गया उसका।

एक प्रसिद्ध सन्त का कहना है कि यदि आप त्राटक का कुछ थोड़ा भी अभ्यास करलें तो बहुत कुछ लाभ उठा सकते हैं। त्राटक के बल पर आप चाहे जिसे इच्छानुकूल चला सकते हैं, चाहे जिसकी गति रोक सकते हैं, चाहे जिसे चलने को विवश कर सकते हैं. चाहें जिसकी बोलती बन्द कर सकते हैं।

एक अन्य सन्त के अनुसार त्राटक-साधक मनुष्य यदि किसी मार्ग चलते हुए व्यक्ति के पीछे चले और उसकी गर्दन के पिछले भाग पर दृष्टि टिका ले तो उस पर अधिकार कर सकता है। वह पीछे स उसकी गर्दन को जिस दिशा में प्रभावित करेगा, उसी दिशा में मुड़ जायगा आगे वाला व्यक्ति। इस प्रकार उसे चाहे जिधर, चाहे जब तक चलाया और चाहे जहाँ ले जाया जा सकता है।

अधिकारी को प्रभावित कर लेना

त्राटक के प्रभाव से किसी भी अधिकारी को प्रभावित किया जा सकता है। एक व्यक्ति, जो शालग्राम पर त्राटक करता था, अपने किसी कार्य से एक बड़े अधिकारी के पास गया। लोगों का कहना था कि अधिकारी बहुत ही रूखे स्वभाव का था और कभी किसी का कार्य नहीं करता था। मिलने आने वालों से तो उसे बहुत ही चिढ़ थी।

किन्तु उस व्यक्ति के दृष्टिपात मात्र से वह द्रवित हो गया। उसने उसकी बात धैर्यपूर्वक सुनी और कार्य करने का वायदा भी उसी समय कर दिया। बाद में उसने पाया कि कार्य बन गया है।

जब विचार तरंगों के स्पष्ट चित्र दिखाई दिये

मैनविले, अलवेटा (कनाडा) के पास के एक फार्म हाउस में जुलाई १९२८ की एक शाम को एक साथ चार हत्याएँ हो गईं सारे क्षेत्र में सनसनी फैल गई। पुलिस ने लाख प्रयत्न किया परन्तु, कुछ भी पता न चल सका। मुकदमा चलने लगा। फार्म हाउस के स्वामी हेनरी बहर के पुत्र वेरनान पर सन्देह था परन्तु वह हत्याओं को स्वीकार नहीं कर रहा था। पुलिस को कोई प्रमाण भी नहीं मिल पा रहा था।

डॉ० लैंगस्नर ने इस मुकदमे में सक्रिय सहयोग दिया। उनका विश्वास था कि हर व्यक्ति के विचार रेडियो तरंगों की भांति आकाश में घूमते रहते हैं। विशेष आयोजन से उन विचार तरङ्गों को पकड़ कर उनका अध्ययन किया जा सकता है। उनकी सुदृढ़ धारणा थी कि विचार तरंगें व्यक्ति के अवचेतन मन में सदैव उत्पन्न होती रहती हैं। उन्हें मनोवैज्ञानिक सुविधापूर्वक ग्रहण कर सकते हैं।

डॉ० लेंगस्नर ने वेरनान से एकान्त में मिलने की स्वीकृति ली। वे एक शब्द भी वेरनान से नहीं बोले। आधे घण्टे तक डॉ० लैंगस्नर की दृष्टि वेरनान के चेहरे पर जमी रही। दृष्टि स्थिर होने पर वेरनान के चेहरे पर डॉ०लेंगस्नर को विभिन्न प्रकार के चित्र दिखाई दे रहे थे। यह उन्हीं विचार तरंगों के चित्र थे जो वेरनान के मस्तिष्क में मुकदमे के सम्बन्ध में बन बिगड़ रहे थे। तीव्र विचार तरंगों के चित्र स्पष्ट दिखाई

दे रहे थे। वेरनान सम्मोहित सा हुआ बैठा रहा। डॉ लैंगस्नर को एक ऐसा चित्र स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगा जिसके बाद उन्होंने दृष्टि हटा ली और हत्या स्थल पर चल दिए। वह चित्र उस स्थान का था जहाँ उसने रायफल छिपाई थी जिससे उसने हत्या की थी। घास के ढेर में उन्हें रायफल मिल गई। वेरनान ने अपने अपराध को स्वीकार कर लिया।

अपराध के क्षेत्र में सनसनी फैल गई। वास्तव में यह स्थिर दृष्टि से—त्राटक भी एक सामान्य प्रक्रिया से विचार की तीव्र तरङ्गों को पकड़ कर चित्र के रूप में देखने की सफल साधना का परिणाम था।

नौकरी की समस्या सहज में सुलझी

स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती एक त्राटक-सिद्ध योगी थे। वे सदा ही परोपकार में तत्पर रहते। किसी को कोई कष्ट है तो उसे दूर करने में रुचि लेते कोई रोता-चीखता तो उसे भी धैर्य बँधाते। कोई रोगादि से पीड़ित होता तो उसका रोग दूर होने का उपाय करते।

एक दिन एक युवक योगिराज के पास आया और उन्हें प्रणाम करके बैठ गया। उन्होंने उससे कुशल-क्षेम विषयक प्रश्न करने के बाद आने का कारण पूछा। युवक ने कुछ रुकते हुए कहा—'महाराज ! मैं एक वर्ष से अधिक समय से बहुत से सरकारी दफ्तरों की खाक छान चुका हूँ, किन्तु कहीं भी नौकरी नहीं लगी। सभी जगह ऊँचे अधिकारियों के रिश्तेदार या पहुँच वालों के आदमी लग जाते हैं। हम जैसों की कहीं कोई पूछा नहीं।'

योगिराज ने कुछ देर मौन रह कर पूछा—'बच्चा ! तू जहाँ-जहाँ नौकरी की तलाश में गया, वहाँ-वहाँ तेरी योग्यता उस-उस स्थान के योग्य थी या नहीं ? क्योंकि सरकारी नौकरियों में तो जो योग्यता

निर्धारित होती है, उससे कम योग्यता वाले को लिया ही नहीं जा सकता।'

युवक ने कहा—'महाराज ! योग्यता तो सही है, परन्तु सिफारिश का जोर नहीं है मेरे पास। अब समझ में नहीं आता कि किस प्रकार से नौकरी प्राप्त हो ?'

योगिराज ने एक सिद्ध यन्त्र दिया उसे। उन्होंने वैसे यन्त्र अपने हाथ से मोट कागज पर अंकित करके रख छोड़े थे और जिसे देना अपेक्षित होता उसी को देते थे।

युवक को यन्त्र देने के साथ ही निर्देश दिया गया कि 'इस यन्त्र को मढ़वालो काँच में और प्रातःकाल धूप-दीप, गन्ध-पुष्पादि से पूजन करके इस पर अपनी दृष्टि स्थिर करने का अभ्यास करो। नित्य प्रति १५ मिनट कम से कम एक मास तक करो। उसके बाद जिस अधिकारी से नजर मिला कर नौकरी के लिए विवेदन करोगे वही तुम्हें लगा लेगा।'

युवक ने वही किया, एक मास तक निरन्तर उस यन्त्र पर दृष्टि टिकाने का अभ्यास करता रहा। बाद में जब एक दफ्तर में नौकरी निकली और उसके इंटरव्यू में गया तो चुनाव करने वाले सदस्य उसी के पक्ष में रहे और उसे नौकरी मिल गई।

विवाह में मन चाही पत्नी मिली

कहते हैं कि एक युवक के माता-पिता जिस कन्या के साथ उसका विवाह करना चाहते थे, युवक को वह पसन्द न थी। वह एक अन्य कन्या को चाहता था, जब कि वह कन्या इसकी ओर आकर्षित नहीं थी।

वह भी इन्हीं योगिराज की शरण में पहुँचा और सभी बातें उनसे निवेदन कीं। योगिराज बोले कि 'तेरे माता-पिता को तो मैं समझा सकता हूँ, पर जिस कन्या को तू चाहता है, वह तुझे नहीं चाहती तो उसमें क्या कर सकता हूँ।

युवक के माता पिता भी कभी-कभी वहाँ आते रहते थे। जब वे आये तब महात्मा ने उनके पुत्र के विवाह से सम्बन्धित चर्चा छेड़ दी और उन्हें परामर्श दिया कि 'जमाना खराब है, युवक-युवतियों की इच्छा के विरुद्ध विवाह-शादी जैसे उत्तरदायित्यपूर्ण कार्य नहीं करने चाहिए।'

उन्होंने योगिराज की बात मान ली, किन्तु समस्या यह थी कि युवक जिसकी इच्छा करता था, वह किस पर आकर्षित हो? महात्मा जी ने कहा कि यदि वह किसी अन्य के प्रति आकर्षित नहीं है और अकारण ही इससे द्वेष करती है तो उसकी द्वेष-भावना मैं दूर करा दूँगा। किन्तु यदि वह किसी और से प्रेम करती होगी तो मैं इस मामले में हाथ नहीं डालूँगा।'

योगिराज ने अन्य माध्यम से यह पता लगा लिया कि कन्या किसी अन्य से प्रेम नहीं करती, किन्तु इस युवक से द्वेष करने का कारण दोनों परिवारों में पुश्तैनी द्वेष होना ही है। इस स्थित में योगिराज ने यह अच्छा समझा कि इस विवाह के लिये अवश्य ही उपयुक्त परिस्थिति उत्पन्न की जाय, क्योंकि इससे दोनों परिवारों का पारस्परिक द्वेष समाप्त हो जायगा।

महात्माजी ने उसी प्रकार का एक यन्त्र उस युवक को देकर उसी प्रकार दृष्टि स्थिर करने के अभ्यास का निर्देश किया। उसने भी नियम पूर्वक एक मास तक अभ्यास किया और इस प्रयत्न में रहने लगा कि कन्या और उसके परिवार वालों से किसी प्रकार चार नजरें हो जाय।

जब उसे ऐसा सुयोग मिल गया तो उसने अनुभव किया कि न तो कन्या ही द्वेष रखती है, न उसके परिवार वाले ही। वरन् कन्यापक्ष की ओर से ही विवाह का प्रस्ताव किया गया।

व्यापारिक समस्याओं का समाधान

योगिराज के पास अनेकों व्यापारी अपनी-अपनी समस्याएँ लेकर आते रहते थे। सभी सामान्य समस्याओं का समाधान योगिराज अपने दृष्टिपात एवं आशीर्वाद आदि से ही करने का प्रयत्न करते थे। किन्तु विशेष स्थिति में वे उसी यन्त्र पर दृष्टि स्थिर करने के अभ्यास का निर्देश देते।

एक बार एक व्यापारी को बड़ा तगड़ा घाटा हो गया। गाँठ की रकम गई वह तो गई हो' दूसरों का भी भारी देना हो गया। बेचारे व्यापारी का बुरा हाल था। लोग उसे बेईमान बताते और चैन से नहीं बैठने देते। नालिश, डिग्री, कुर्की आदि की स्थिति भी उत्पन्न हो गई थी।

योगिराज ने उसे वहीं यन्त्र दिया, जिस पर वह दृष्टि टिकाने का अभ्यास करने लगा। बाद में वह जहाँ कहीं जाता, वहीं उसका आदर होने लगा। जिनका लेना था उन्होंने तंग करना छोड़ दिया उसे और बहुत ही उदारता दिखाने लगे। उसके बाद ही उसे व्यापार में भी लाभ होने लगा। यहाँ तक कि सब घाटा पूरा हो गया।

यन्त्र देते समय एक वचन लिया था महात्माजी ने कि जब तुम्हें लाभ होने लगे, परेशानियों में कमी आयें, तभी से ऐसा प्रयत्न करना कि धीरे-धीरे ऋण चुक जाय। यदि ऐसा नहीं करोगे तो फिर हानि उठानी होगी।

व्यापारी को लाभ हुआ तो उसने पूरा ऋण चुका दिया। सभी लोग उसकी ईमानदारी की प्रशंसा करने लगे। बाजार में उसकी पहले से भी अधिक साख बन गई।

एक अन्य व्यापारी भी लाखों के घाटे में चला गया। उसे कभी आशा भी न थी कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जायगी। जिनका लेना था वे उसके पीछे लग गए। जायदाद आदि बिकने पर जो रुपया मिला वह इतना कम था, कि कर्जे का बहुत कम अंश ही चुक सका। जिन्हें रुपया दिया गया, वे भी प्रसन्न न किये जा सके।

उसे भी यही यन्त्र दिया गया। बड़े मनोयोग से अभ्यास किया उसने। उसके बाद उसकी भी सभी परेशानियाँ दूर होने लगीं धीरे-धीरे लाभ होने लगा व्यवसाय में। उसने भी सर्व प्रथम ऋण चुकाने का ही कार्य किया। उसके दिन पुनः फिर गये।

मुकदमे में जीत

इन्हीं महात्मा के विषय में कहा जाता है कि एक भक्त को अपना मुकदमा जीतने में सफलता मिलीं। किन्तु महात्माजी ने पहिले यह पता लगा लिया कि मुकदमा झूठा तो नहीं है। क्यों कि वे झूठे व्यक्ति के पक्ष में कभी भी नहीं रहते थे।

योगिराज ने उस व्यक्ति को भी वही यन्त्र प्रदान किया और तीस दिनों तक यन्त्र पर त्राटक करने का निर्देश दिया। उसने वही किया, जिससे उसके नेत्रों को अद्‌भुत शक्ति प्राप्त हो गई। फिर भी उसका अभ्यास निरन्तर चलता रहा।

वह जब-जब कचहरी में उपस्थित होता, न्यायधीश से दृष्टि मिलाने का प्रयत्न अवश्य करता। उसने अनुभव किया कि न्यायाधीश उसके प्रति अधिक उदार होता जा रहा है। अन्त में उसे यह देख कर बड़ा

सन्तोष हुआ कि न्यायालय का फैसला उसी के पक्ष में रहा है। अपील में भी उसी की जीत हुई।

एक अन्य व्यक्ति किसी जुर्म में फँस गया। यद्यपि जुर्म के प्रति अस्वीकार भी नहीं किया जा सकता था तो भी वह व्यक्ति योगिराज के पास जाकर बहुत रोया-गिड़गिड़ाया, तब उन्हें उस पर दया आ गई। उनके यन्त्र के अभ्यास से वह भी बिना किसी प्रकार के दण्ड के बिल्कुल बरी कर दिया गया।

शत्रुता दूर हुई

एक व्यक्ति की किसी अधिक प्रबल व्यक्ति से शत्रुता हो गई थी। इस कारण उसे हानि भी बहुत उठानी पड़ी। शत्रुता यहाँ तक बढ़ गई थी कि प्राणों तक पर नौबत आ गई। यही आशंका रहती कि न जानें कब, कौन बलिदान का बकरा बन जाय।

उस व्यक्ति ने योगिराज की शरण ली और कहा कि 'इस परिस्थिति से आप ही बचा सकते हैं।' उन्होंने उसे भी मन्त्र देकर वही युक्ति बताई, जिसे करने पर उसने पाया कि शत्रु ने अपना रवैया बदल दिया है और वह कुछ उदारता का परिचय देने लगा है।

धीरे-धीरे दिन बीतने लगे और शत्रुता कम होने लगी। एक दिन मध्यस्थों ने प्रयत्न करके दोनों में मेल करा दिया। इस प्रकार त्राटक के प्रभाव से ही शत्रुता भी दूर हो गई।

अतीत की भूली घटनाओं की स्मृति

मानव-मस्तिष्क जब वर्तमान के सम्पर्क में आता है तब अतीत को छोड़ देता है और मजे की बात यह कि भविष्य भी वर्तमान होने के बाद अतीत ही बन जाता है।

कुछ घटनायें मनुष्य को याद रहती है, कुछ की धुँधली स्मृति होती है और कुछ की तो स्मृति ही नहीं रहती। जिनकी स्मृति नहीं रहती, उनमें बहुत-सी महत्वपूर्ण बातें छिप जाती हैं।

'त्राटक-साधना के प्रभाव से अतीत की सभी घटनायें सामने आ जाती है। अतीत क्या, वह अतीत भी, जो बहुत दूर छूट गया इस जीवन से, अर्थात् विगत जन्म का अतीत भी त्राटक के अभ्यास से छिपा नहीं रह सकता।'

और उक्त विचार एक योगी परमानन्द के थे। वे त्राटक योग के ही उपासक थे। उनका कहना था कि 'एक बार मेरे मन में बड़ी उत्कण्ठा उत्पन्न हुई अपने पूर्व जन्म की जानकारी करने की। इसलिये अपने गुरुदेव की सेवा में पहुँचा और उन्हें अपनी जिज्ञासा बताई। गुरुदेव बोले कि 'तुझे जो त्राटक का अभ्यास बताया गया है, उसी की दृढ़ता होने पर वह सब कुछ प्रत्यक्ष हो जायगा, जिसे तू जानना चहाता है। उसे जितना-जितना करेगा, उतना-उतना ही सामर्थ्यवान बनता जायगा।'

गुरुदेव का आदेश सुनकर मैं अपनी उसी साधना को करता रहा। वस्तुतः वही हुआ, जो गुरुदेव ने कहा था। धीरे-धीरे मेरे में दिव्य सामर्थ्यें बढ़ती रही और मैंने अनुभव किया कि कुछ ऐसा अद्भुत और अपूर्व हो गया हूँ मैं, जैसा पहिले कभी भी नहीं था।

एक दिन मैंने विचार किया कि मुझे पिछली बातों की स्मृति होनी चाहिये। बस, यह विचार थोड़ी ही देर में मूर्त्त रूप ले बैठा। मुझे लगा कि घटनायें उभर रही है, उभरती जा रही हैं। वे जितनी उभर रही थीं, उतने ही दृश्य घूमते जा रहे थे सिनेमा के दृश्यों के समान।

और वे दृश्य जाने हुए कम, अनजाने अधिक थे। किन्तु ऐसा लगता था कि मैं उन सभी दृश्यों से, सभी घटनाओं से अभिन्न हूँ। वे सभी घटानायें मुझमें जुड़ी है और मैं उनमें जुड़ा हूं। इतना अधिक जुड़ा हूं

कि अब अपने को उनसे पृथक् मान ही नहीं सकता था। क्योंकि वे सब मेरे स्मृति पटल पर अंकित होती जा रही थीं बड़ी तेजी से।

मैंने देखा—एक घर है वैभव से सम्पन्न, सभी प्रकार की सुख-सुविधायें हैं उस घर में। दास-दासी भी दिखाई देते हैं। भव्य पलंग है एक ओर, मैं लेटा हूँ उस पर, नींद आने लगी है मुझे, तभी एक सुन्दरी स्त्री जगाती है—'स्वामिन्! आप सो रहे हैं, जगिये न, देखिये कोई साधु बाबा पुकार रहे है आपको।'

मैंने झल्लाकर कहा—'साधु-वाधु तो आते ही रहते हैं, मुझे सोने दिया होता, रात भर का जगा हूँ न!'

स्त्री ने मुसकरा कर कहा—'मगर वे कहते हैं, मैं गुरु हूँ उसका, अभी बुलाओ उसे, अन्यथा अनिष्ट हो जायगा।'

अनिष्ट की बात सुनकर जाता हूँ साधु बाबा के पास। उन्हें देखने से प्रतीत होता है कि कुछ पहिचाने हुए-से हैं। और अब तो पहिचानता ही हूँ उन्हें, मेरे गुरुदेव जैसा ही रूप-रंग था उनका। सोचता हूँ क्या यह पूर्व जन्म में भी गुरु थे मेरे?

मुझे देखते ही साधु बाबा ने कहा—'सावधान! आज तेरा ही एक सेवक हत्या कर देगा तेरी और अगले जन्म में तू साधु होगा।'

और वास्तव में हत्या कर दी गई। स्मृति पटल पर इतना तो उभर ही आया कि मैंने आक्रमणकारी का डटकर मुकाबला किया था। इससे अधिक कुछ पता नहीं चला।

मैं सोचता रहा कि वह स्त्री कहाँ गई जो उस जन्म में मेरी पत्नी थी? तभी उसे स्त्री का रूप पुनः उभरा और यह भी दिखाई दिया कि वह एक घटिया से घर में, मैले वस्त्र पहिने हुए है। लगता है किसी बहुत ही गरीब घर में हो।

बस, विचार इन्हीं दृश्यों में उलझते रहे। छोड़कर अन्य दृश्य देखने की चेष्टा की तो भी वे दृश्य ही बार-बार घूम जाते। मैंने गुरुदेव से

पूछा उस विषय में तो वे बोले—'यह तेरे निकटस्थ अतीत का, इस जन्म से पहिले जन्मका ही इतिहास है। यदि इससे भी पहिले का पता लगाना है तो अभी साधना को और अधिक दृढ़ करो।'

योगी ने बताया कि अभी मैं अपनी त्राटक-साधना को अधिक दृढ़ करने में लगा हूँ। समझता हूँ कि पूर्वजन्म का होने के समान ही अन्य जन्मों का ज्ञान भी मुझे अवश्य हो जायगा।

सर्पों का वशीकरण

त्राटक योगी समस्त प्राणियों को वश में करने में समर्थ होता है। उसके लिये मनुष्य ही क्या, समस्त पशु-पक्षी भी उतने ही सहज बन जाते हैं। भयंकर से भयंकर तथा क्रूर सिंह, चीते, भालू-रीछ, हाथी आदि भी उसके प्रभाव के समक्ष नत मस्तक रहते हैं। भयंकर विषैले नाग भी अपना स्वभाव भूलकर सौम्य बन जाते हैं।

विन्ध्यगिरि के एक निर्जन स्थान में एक महात्मा आभानन्द रहते थे। वहाँ अनेकों भयंकर जीव सर्वत्र विचरण करते रहते। महात्माजी के स्थान पर भी उनकी कमी नहीं रहती। भयानक विषैले सर्प तो सदा ही उनके आस-पास घूमते थे। कहते हैं कि महात्माजी उन्हें दूध पिलाया करते और सर्पों के पीने से बचे हुए दूध को भगवान् का प्रसाद मानकर स्वयं पीजाते। उस दूध के अतिरिक्त वे और कुछ भी सेवन नहीं करते थे।

एकबार उनके एक अनन्य भक्त उस समय वहाँ पहुँचे जब महात्मा-जी सर्पों के लिये एक बड़ी नाँद में दूध भर रहे थे। कुछ देर बाद ही उन्होंने देखा कि इधर-उधर से सर्प आ-आकर दूध पीने लगे। उन सर्पों में एक सर्प बहुत ही स्वार्थी प्रतीत होता था। वह अपने से दुर्बल और

छोटे सर्पों को पीछे धकेल कर स्वयं दूध पीता जाता। छोटे सर्प जब दूध पीने को बढ़ते तभी उन्हें धकेल देने का उपक्रम करता।

महात्माजी ने उसकी यह हरकत देखी तो जोर से बोले—'सर्पराज! उन सबको दूध पीने दे, घबरा मत तेरे लिये दूध की कमी नहीं रहेगी। तू भी एक ओर सटकर दूध पीता रह।'

किन्तु उस सर्प ने शायद महात्माजी की बात पर ध्यान न दिया और दूसरे सर्पों को धकेलने की हरकत से रुका नहीं। यह देखकर महात्माजी ने उसे बल पूर्वक उठा लिया और अपने आसन के पास रखकर बोले—तब तक यहीं बैठा रह जब तक दूसरे सर्प दूध न पीलें।' यह कह कर उन्होंने एक तीव्र दृष्टि उस सर्प पर डाली और तब वह सम्भवतः विवश होकर वहीं पड़ा रहा।

यह दृश्य भक्त भी देख रहा था। उसने कहा कि 'यह तो बड़ा मक्कार मालुम होता है।' शायद सर्पने भी उनकी बात सुन-समझ ली। इसलिये उनकी ओर बढ़ता हुआ-सा फुंकार मारने लगा।

महात्माजी ने सर्प से कहा—'गड़बड़ न कर, चुपचाप बैठा रह।' सर्प पुनः शान्त हो गया तो वे भक्त से बोले—'यह सर्प नया आया है, आज ही। इसे यहाँ के नियम आदि का ज्ञान नहीं है अभी, इसीलिये अपने स्वभाव के अनुसार हरकत कर रहा है। दो-चार दिन में यह भी यहाँ की परिस्थिति का अभ्यस्त हो जायगा।'

कुछ देर में सर्पों की भीड़ घट गई तब उन्होंने उस सर्प से कहा—'अब तू भी जाकर दूध पी ले। देख वत्स! यहाँ का यह नियम है कि सभी को समान समझे और दूसरों का ध्यान पहिले रखे। अगर स्वार्थ दृष्टि न रखेगा तो दूध की भी कमी नहीं रहेगी तेरे लिये।'

महात्माजी की बात सुनते ही सर्प दौड़ पड़ा नाँद की ओर। और मजे से दूध पीने लगा। अन्त में सभी सर्प चले गये इधर-उधर पर, वह

सर्प वहीं महात्माजी के आसन के निकट जा बैठा। जब महात्माजी ने उसे एक वृक्ष के नीचे बैठने का संकेत किया तब वह वहाँ पहुँच गया।

थोड़ी देर बीतने पर कुछ ग्रामीण स्त्री-पुरुष वहाँ आकर बैठ गये। भक्त ने देखा कि महात्माजी ने नाँद से वही दूध लेकर उन सबको प्रसाद रूप में बाँटा और जब वे चले गये तब उस भक्त से बोले—'अब यह दूध हमारे-तुमारे लिये ही बचा है।'

भक्त ने शंका व्यक्त की—'यह तो सर्पों के द्वारा झूठा किया हुआ है, अवश्य ही विषैला हो गया होगा। इसके पीने का परिणाम भी प्राण-घातक हो सकता है।'

महात्माजी ने कहा—'सर्पों में जो आत्मा है, वही मुझ में, तुम में तथा और सभी प्राणियों में है, और आत्मा ही परमात्मा है, इसलिये यह दूध परमात्मा का ही प्रसाद है। ऐसा दूध मैं तो नित्य प्रति पीता ही हूँ, यह ग्रामीण स्त्री, पुरुष, बालक, वृद्ध भी नित्य प्रति यहाँ आकर प्रसाद ग्रहण करते हैं। विश्वास रखो—तुम्हारे लिये भी यह अमृत के समान ही लाभदायक होगा।' यह सुनकर भक्त ने भी प्रसाद रूप उस दूध को सादर ग्रहण किया।

पशु-पक्षियों का वशीकरण

त्राटक-साधना से साधक की आँखों में समस्त शक्ति एकत्र हो जाती है और वह आँखों के द्वारा ही समस्त प्राणियों को अपने अनुकूल बनाने में समर्थ होता है। उसमें इतनी सामर्थ्य आ जाती है कि मार्ग चलते हुए जीवों को स्ताम्भित कर दे, आकाश में विचरण करते हुए पक्षियों को दृष्टिमात्र से नीचे गिरालें, भयंकर पशुओं को सौम्य बना दें।

पुराणों में तो इस प्रकार की अनेक घटनायें पढ़ने-सुनने को मिलती ही हैं। जाजलि नामक एक ऋषि ने उड़ती हुई चिड़िया को दृष्टिपात

मात्र से गिरा दिया। दमयन्ती ने पापी व्याध को दृष्टिपात मात्र से भस्म कर डाला। एक ऋषि पत्नी ने सूर्योदय होने से ही रोक दिया इत्यादि। किन्तु निकट अतीत में भी ऐसे अनेक व्यक्ति हो चुके हैं, जिनके अद्भुत कार्यों के प्रति लोग अत्यन्त आकर्षित थे। सम्भव है वर्तमान समय में भी ऐसे अनेक सिद्ध पुरुष हो, जिनकी जानकारी हमें न हो।

उत्तर भारत में एक ऐसे ही सन्त हुए थे अब से लगभग अस्सी वर्ष पूर्व, नाम था 'महात्यागी'। कहते हैं कि वे यथा नाम तथा गुण थे। शरीर पर एक लँगोटी मात्र, अन्य कोई वस्त्र नहीं, चाहे वर्षा, धूप और कैसी भी ठण्ड पड़े। रहने के लिये एक वृक्ष का तना, जिसकी शाख और पत्तियाँ आदि ही छप्पर का काम देती थीं। उन्हें भोजन करते हुए भी कभी किसी ने नहीं देखा, पता नहीं किस प्रकार जीवन-यापन करते थे।

जिस स्थान पर रहते थे, वह भयंकर जंगल में था। पशु-पक्षियों के अतिरिक्त अन्य किसी की पहुँच कठिनता से ही हो पाती थी वहाँ। कभी कोई भूला-भटका पहुँच गया तो पहुँच गया। पर, जो पहुँचता वह उन सन्तजी के प्रति अगाध श्रद्धा के साथ ही लौटता। एक बार एक ऐसे ही श्रद्धालु भक्त से उनके विषय में कुछ जानने का अवसर मिला।

उन भक्तजी ने बताया कि मेरे पिताजी वर्ष में दो तीन बार उनके दर्शनार्थ जाते थे। वे वहाँ दो-तीन दिन ठहर भी जाते थे। किन्तु सन्तजी तीन दिन से अधिक ठहरने ही नहीं देते थे किसी को। पिताजी का कहना था कि वहाँ शेर, चीते, रीछ आदि हिंसक जीवों की भरमार थी। सन्तजी के स्थान पर ही कभी-कभी तो शेर आदि बैठे रहते थे। किन्तु वे वहाँ आने वाले से कभी कुछ भी नही कहते। जो आता, निडर होकर। सन्तजी के स्थान पर ही क्या, मार्ग में भी कोई शेर, चीता मिल जाता तो चुपचाप इधर-उधर चला जाता।

सन्तजी ने एक बार कहा था—'शेर, चीते, रीछ जो भी मार्ग में मिलें, उनसे छेड़छाड़ नहीं करना, चुपचाप निकल आना, आँखें मिलाने

का प्रयत्न न करना उनसे। किन्तु यदि आँखें चार हो ही जाँय तो फिर तब तक नजर मत हटाना, जब तक वह भाग न जाय। अगर नजर मिलने पर नजर झुका लोगे तो वह तुम पर हावी हो सकता है।'

पिताजी ने उनकी आज्ञा का सदैव पालन किया। वे भी इन पर बड़ी कृपा रखते थे। शायद उनकी कृपा का ही फल था कि हमारे पिताजी के पास सभी कुछ एकत्र हो गया था, वे गरीब से अमीर बन गये थे।

पिताजी ने एक बार बहुत आग्रह किया तो सन्तजी अपना चित्र खिंचवाने को राजी होगये। उन्होंने कहा—'किसी फोटोग्राफर को न लाना यहाँ।' इसलिये पिताजी स्वयं ही केमरा ले गये थे। उन्होंने उनका फोटो लाकर पूजा के स्थान पर रख दिया। हमारे यहाँ भगवान् राम-सीता के चित्र की पूजा होती है, उसी चित्र के समीप वह चित्र लगा दिया गया। अब भी वह चित्र पूजते हैं हम, किन्तु पिताजी के बाद उस स्थान पर हममें से कोई भी न जा सका।

उन्होंने पूछने पर बताया कि -सन्तजी अब भी जीवित हैं। या नहीं यह हमारी जानकारी में नहीं है। पिताजी को गये हुए भी जमाना बीत गया। हम तो वहाँ का रास्ता भी नहीं जानते।'

वस्तुत- उक्त महात्यागीजी जैसे बहुत-से सन्त पुरुष समय-समय पर होते रहे हैं इस देश में, जिनमें अपार शक्ति-सामर्थ्य थी और जो सदैव सभी प्रांणियों के कष्ट दूर करने के लिये प्रयत्नशील रहते थे, और इसी-लिये पशु-पक्षी ही नहीं, मनुष्यादि सभी उनके वशीभूत हो जाते थे।

उफनती नदी उतर गई

मुगल शासन का समय था, दक्षिण के रंजनगू नामक गाँव में

शान्तोबा नामक एक धनवान रहते थे। उनकी पत्नी का नाम उर्मिला था। वह साध्वी एवं परम पतिव्रता थी।

शान्तोबा को युवावस्था में ही वैराग्य हो गया। उन्होंने अपनी सभी सम्पत्ति गरीबों, दीन-दुखियों में बाँट दी और सब कुछ छोड़ कर साधना करने के उद्देश्य से पर्वत पर जा पहुँचे और वहाँ योग-साधन करने लगे। उस समय उन्हें यह भी ध्यान न रहा कि पत्नी युवती एवं परम सुन्दरी है, इसका क्या होगा ?

शान्तोबा के चले जाने से उर्मिला बहुत दुःखित थी। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करे, कहाँ जाय ? तभी उसके कुछ हितैषियों ने परामर्श दिया कि 'तू पति के पास ही क्यों नहीं जाती ? वह जैसे रहता है तू भी वैसे ही रहना। अवश्य ही वह तुझे दुत्कारेगा नहीं। क्योंकि एक तो तू परम सुन्दरी, युवती और उस पर सदाचारिणी रही है। पति का प्रेम भी बहुत रहा है तुझ पर।

उर्मिला ने उनकी सलाह मानी और पति के पास चल दी। कुछ लोगों ने उसे वहाँ पहुँचने में सहायता भी की। शान्तोबा ने पत्नी को देखा तो बोले—'तू यहाँ क्यों आई है ?

वह बोली—'स्वामिन् ! स्त्री का सर्वस्व तो पति ही है, उसकी अन्तिम गति भी वहीं है। यदि पति के पास न जाय तो फिर जाये भी कहाँ ? यहाँ आप जैसे रहते हैं, मैं भी आपकी सेवा करती हुई उसी प्रकार रहूँगी। इसलिए मुझे यहाँ रहने की आज्ञा दीजिये।'

शान्तोबा बोले—'समझले, यहाँ धन-सम्पत्ति तो है नहीं। भोजन भी भिक्षावृत्ति से ही चलेगा। तेरे यह अलंकार-आभूषण साधना में विघ्न स्वरूप होंगे, इनका भी त्याग करना होगा यदि तू दुःख सुख उठा कर भी यहाँ रहने को तैयार हो तो रह सकती है।

उसने स्वीकार कर लिया उस प्रकार रहना। शरीर के आभूसणादि उतार दिये और केवल एक साड़ी ही रही शरीर पर। अब वह पति के

साथ उस अवस्था में रहती हुई भी अत्यन्त सुखी थी। पति के लिये वन में जाकर पूजा के फूल एकत्र करती, फल यथा ईंधन आदि भी तोड़ कर लाती। इस प्रकार पति सेवा में लगी रहती परिश्रम पूर्वक और उसी में सन्तुष्ट थी। वह भी उनके साथ साधना करती रहती।

एक दिन शान्तोबा ने पत्नी के धैर्य की परीक्षा लेनी चाही, इसलिए उसे आज्ञा दी—'उर्मिला ! आज तो रोटी खाने की इच्छा है, तू निकट के गाँव से कुछ रोटियाँ माँग ला।'

उर्मिला चल पड़ी। गाँव में पहुँचो तो लोगों ने उसकी परवाह न की। बेचारी को कुछ घरों से एक-एक सूखी रोटी मिल पाई। वह उन रोटियों को लेकर लौट पड़ी।

तभी वर्षा होने लगी। ऊर्मिला के शरीर पर एक ही साड़ी थी, वह भी स्थान-स्थान पर फट गई थी। वर्षा तेज हो गई, उसकी धार शरीर पर वेग पूर्वक पड़ने लगी। वर्षा को सहन न करती हुई भी वह अपनी साड़ी में किसी प्रकार रोटियों को ढक कर चल रही थी, जिससे भीग न जाँय वे। पति ने इतने दिनों में तो रोटियों की इच्छा की, वह भी भीगी जा रही थीं।

मूसलाधार वर्षा के कारण भीमा नदी विकराल रूप से चढ़ आई। उसकी भयंकर तरंगें अच्छे अच्छों के दिल दहला देती थीं। मार्ग में वह नदी थी। जब उर्मिला रोटी लेने गई थी तब नदी प्रायः सूखी हुई-सी थी, किन्तु लौटी तो उसका विकराल रूप देख कर सोचने लगी कि अब क्या हो ? इसके पार जाने के लिए तो कोई साधन ही नहीं दिखाई देता।

ऊपर से जोरदार वर्षा, सामने भयंकर रूप से उफनती हुई नदी, क्या करे उर्मिला ? किस प्रकार पहुँचे उस पार जिससे पति को रोटियाँ दे सके ?

उसने चारों ओर देखा—कहीं कोई नहीं था। निर्जन वन मार्ग था वह। उस पर भी ऐसी भीषण वर्षा के समय कौन आता वहाँ ? किसी भी जीव की संभावना नहीं थी।

उर्मिला ने आकाश की ओर देखा—उसमें परिवर्तन हुआ. बादल छितराने लगे, वर्षा थम गई। किन्तु नदी, उसका वेग तो अब भी भयंकर था। वह उसकी ओर देखने लगीं आँखें फाड़ कर, वह एकटक देखे जा रही थी उसे। और तभी उसने देखा कि नदी का जोश ठण्डा होने लगा है। कुछ ही देर में उसकी पूर्ववत् स्थिति हो गई पानी रह भी गया तो बहुत ही थोड़ा।

वह नदी पार करके पति के पास पहुँची। रोटियाँ अब भी सुरक्षित थीं। शान्तोबा ने उसकी इतनी लगन और श्रद्धा देखी तो बहुत प्रसन्न हुए। बोले—'उर्मिले ! धन्य हो गया मैं ऐसी धर्मात्मा पत्नी पाकर।'

खजाने से नोटों की गड्डियाँ निकल आईं

मध्य प्रदेश में भिण्डजिला है, उसी में अजीतपुरा ग्राम से लगभग पाँच किलोमीटर की दूरी पर, एक पर्वत की चोटी पर काली देवी का मन्दिर है। वहाँ के के पुजारी सिद्ध योगी पुरुष थे। वे सर्प काटे का विष उतारते, रोगों का उपचार करते तथा संकटग्रस्त मनुष्यों के संकट दूर करने में लगे रहते।

कहते हैं कि वे बड़े चमत्कारी थे। एक बार परगनाधीश ने उनकी प्रशंसा सुन कर उनसे भेंट की और कुछ चमत्कार दिखाने का अनुरोध किया। पुजारी जी ने आकाश की ओर देखा तो उनके हाथ में एक सेव आ गया। उन्होंने वह सेव काट कर सभी को खिलाया तो यह स्पष्ट हो गया कि वह नकली नहीं था।

उसके बाद उन्होंने और भी अनेक प्रकार के फल मिठाइयाँ आदि मँगाये। वे आकाश की ओर देखते हुए हाथ कुछ ऊँचा करते तभी कोई वस्तु उनके हाथ में आजाती। इस चमत्कार पर सभी आश्चर्य कर रहे थे, किन्तु परगनाधीश का कुछ आश्चर्य न हुआ। वे बोले—इन चमत्कारों में क्या विशेषता है ? बहुत-से लोग दिखाते हैं यह सब तो। कोई नई बात दिखायें तब कुछ समझा जाय।'

पुजारीजी बोले—'अच्छा तो अब नई बात ही देखिये। आपने तहसील के खजाने में रुपये जमा कराये और उन्हें गिनवा कर तालों में बंद करा दिया सुरक्षित रूप से। साथ ही आपने इस्पेक्शन नोट भी लिखा है अपना। कुछ अन्य कागजातों पर भी हस्ताक्षर किये हैं, जिससे प्रमाणित होता है कि वे कागजात भी हस्ताक्षर किये हैं, जिससे प्रमाणित होता है कि वे कागजात भी आपकी जानकारी में है। बताइये, यह ठीक कहा मैंने या इसमें कुछ झूठ है ?

परगनाधीश ने कहा—'आपने सभी कुछ ठीक कहा है, किन्तु यह कार्य तो नियमित रूप से होते ही रहते हैं। सभी जानते हैं इस रूटीन को, इसलिए इसमें कुछ अधिक विशेषता नहीं है।'

पुजारी जी ने कहा—'नित्य प्रति यह सब इसी प्रकार होता हो, यह तो सम्भव नहीं है, फिर भी अभी आप कुछ ऐसा देखेंगे अभी जो बहुत ही चौंकाने वाला होगा।'

यह कह कर उन्होंने पीछे की ओर दृष्टिपात किया और फिर उधर ही हाथ बढ़ाया। कुछ क्षण में ही परगनाधीश तथा और सभी ने देखा कि पुजारी जी के हाथों में नोटों की गड्डियाँ चली आ रही हैं। साथ ही बहुत-से कागज और इन्स्पेक्शन नोट भी।

पुजारी जी ने कहा—'पहिचानिये यह वही इन्स्पेक्शन नोट है न, जो आपने लिखा है ? यह वही कागजात हैं न, जिन पर आपके हस्ताक्षर

हो रहे हैं ? यह वही नोट हैं न जिन्हें आप खजाने में अपने ही सामने वन्द करा कर आये हैं ?'

परगनाधीश ने देखा सभी कागजों को, जिन पर उनके हस्ताक्षर थे। नोटों की गड्डियों को भी, जो वही हो सकती थीं। उन्हें स्वीकार करना पडा कि 'अवश्य ही यह सब वही हैं, जिन्हें मैंने स्वयं ही कोषागार में सुरक्षित रूप से रखवाया है।'

उनके द्वारा उक्त तथ्य स्वीकार कर लेने पर पुजारीजी ने हाथ पीछे कर-करके सभी गड्डियाँ और कागजात हवा में उछाल दीं। गड्डियों आदि को हवा में उछलते तो सभी ने देखा, किन्तु यह न देख सके कि कब, किधर चली गई ?

एक शरी से दूसरे शरीर में प्राण प्रवेश

इन्हीं सिद्ध पुजारीजी के विषय में कहा जाता है कि वे परकाया प्रवेश भी जानते थे। अभी दस वर्ष पूर्व ही घटना होगी कि नत्थे खाँ नामक व्यक्ति का एक लड़का सर्प के काटने से मर गया था, जिसे कब्र में गाढ़ा गया था। एक दिन लोगों ने देखा कि पुजारीजी ने उस कब्र को खोद कर नत्थे खाँ के लड़के के शव को बाहर शिकाल लिया। फिर अपने वस्त्र उतार कर स्वयं भी उसके पास ही लेट गये।

कुछ देर बाद ऐसा लगा कि नत्थे खाँ के लड़के के शरीर में स्पन्दन होने लगा है और पुजारीजी का शरीर धीरे-धीरे निष्प्राण होता जा रहा है। उसके बाद नत्थे खाँ के पुत्र ने पुजारी जी का शरीर उसी कब्र में गाढ़ दिया और फिर गाँव की परिक्रमा करके रेलवे स्टेशन की ओर चल दिया।

उसके चार दिन बाद की ही घटना है। गाँव के ही एक सुनार ने नत्थे खाँ के लड़के को हरिद्वार में देखा था। इससे स्पष्ट है कि पुजारी के

विषय में परकाया प्रवेश की घटना मिथ्या नहीं है। यह आदि काल के ही प्रयोग में लाई जाती रही है। किन्तु वर्तमान समय में इस प्रकार की सिद्धि-सामर्थ्य के दर्शन शायद अधिक खोज करने पर भी न हो सकें।

अविश्वास का दण्ड

चान्दोई क्षेत्र में उद्भड़जी जोशी नाम से एक गुप्त योग-साधक हो गये हैं। वे गायत्री जप के साथ त्राटक योग का भी साधन किया करते। इससे उन्हें सिद्धि रूप में अनेक प्रकार के चमत्कारों की सामर्थ्य प्राप्त हो गई थी।

एक बार एक व्यक्ति ने उनकी सिद्धि की परीक्षा लेने के उद्देश्य से अपने हाथ में एक रुपया रख कर मुट्ठी बन्द कर ली और पूछने लगा 'महाराज ! बताइये मेरी मुट्ठी में क्या है ?

महाराज ने पहिले तो कुछ उत्तर ही नहीं दिया, किन्तु बार-बार पूछने पर उसे समझाते हुए बोले कि—'साधु पुरुषों की इस प्रकार परीक्षा लेना उचित नहीं है। यदि तुम्हारी कोई व्यक्तिगत समस्या हो तो बताओ, मैं उसके समाधान में अवश्य सहयोग दूँगा। व्यर्थ की बातों में कोई लाभ नहीं है।'

किन्तु वह व्यक्ति अपनी हठ पर अड़ा था, इसलिये न माना। और कहने लगा—आपकी सिद्धि की बहुत प्रशंसा सुनी जाती है, किन्तु आप में सिद्धि है या नहीं, यह मैं स्वयं प्रत्यक्ष रूप से देखना चाहता हूं।

उसका दुराग्रह देख कर वे बोले—'तुम्हारे हाथ में जिस रंग की वस्तु है, तुम्हारी त्वचा का रंग भी वैसा ही हो जायगा।' यह सुन कर उसने मुट्ठी खोली तो उसे बहुत आश्चर्य और दुःख हुआ कि जहाँ रुपया रखा था वहाँ की त्वचा, उतने ही भाग में श्वेत हो गई थी। श्वित्र के

उस दाग को दूर करने की उसने उनसे प्रार्थना की तो वे बोले—'मैं इसमें कुछ भी नहीं कर सकता, यह दाग तो अमिट हो गया।' वास्तव में बहुत उपचार करने पर भी उसका वह दाग मिट नहीं सका।

शिष्य को डूबने से बचाया

इन्हीं उद्भड़जी ने एक बार एक शिष्य के विषय में भविष्यवाणी करते हुए उससे कहा—'तू अमुक दिन नर्मदा तट पर मत जाना अन्यथा अनिष्ट होगा।' उसने स्वीकार किया कि नहीं जाऊँगा। किन्तु उसे अपनी बात का ध्यान न रहा और वह अकस्मात् नर्मदा तट पर जा पहुँचा।

कारण यह था कि उसी दिन उसका कुछ आवश्यक सामान नाव से आने वाला था। जहाँ नाव आकर खड़ी हुई उसके निकट ही एक बड़ा शिलाखण्ड था। वह उस पर खड़ा होकर नाव के सामान को देख ही रहा था कि पाँव खिसकने से जल में जाकर डूबने लगा तो गुरुदेव को पुकारने लगा।

इधर महाराजजी ने अपनी दिव्य दृष्टि से इस घटना को देख लिया और तब एक घण्टा भर के लिये मुख ढक कर सो गये। उस व्यक्ति के डूबने की बात सर्वत्र फैल गई, किन्तु एक घण्टा ही व्यतीत हुआ होगा कि वह व्यक्ति महाराजजी के पास आता हुआ दिखाई दिया।

उसने आते ही उनके चरण पकड़ लिये और बोला—'महाराज! 'आपने मुझे आज नर्मदा तट पर न जाने की चेतावनी दी थी, किन्तु अज्ञानवश मैंने उसकी उपेक्षा की, जिसके फल स्वरूप नदी में डूब गया। किन्तु आपने उस समय भी मुझे घसीट कर किनारे पर लगा दिया। पकी इस महान् अनुकम्पा को मैं कभी नहीं भूल सकता।

तीव्र हवा में भी दीपक जलता रहा

एक बार कुछ भक्त महाराज जी की सेवा में बैठे हुए थे। महाराज जी के निकट ही घृत का एक दीपक जल रहा था। दरवाजे की ओर से हवा का तीव्र झोंका आता तो ऐसा लगता कि दीपक बुझने को हो। महाराज जी ने दीपक को स्थिर दृष्टि से देखा तो उसका कँप-कँपाना कम हो गया।

पुनः झोंका आया और लौ काँपने लगी। बुझने की आशंका में एक भक्त ने द्वार बन्द करना चाहा तो वे बोले— दरवाजा खुला रहने दो, कैसी भी हवा हो दीपक बुझेगा नहीं।'

वही हुआ, हवा के तीव्र झोंके भी दीपक को बुझाने में असमर्थ रहे, यह देख कर सभी आश्चर्य करने लगे।

डाकुओं से सुरक्षा

कहते हैं कि पहिले डाकू जब किसी के यहाँ डाका डालते तब उसकी सूचना बहुत पहिले ही गृह स्वामी को दे देते। उसका उद्देश्य यह होता था कि गृह स्वामी उनकी माँग के अनुसार धन उनके पास पहुँचा दे तो उन्हें बल प्रयोग न करना पड़े। कुछ लोग उस आतंकमयी स्थिति से बचने के लिए ऐसा ही करते थे। यदि माँग के अनुसार धन देने की सामर्थ्य न होती तो कम धन भेज कर स्पष्ट कहला देते थे कि जितना धन वे माँगते हैं, उतना नहीं हैं उनके पास।

वैसे तो डाकू लोग पहिले ही पता कर लेते थे स्थिति का, तो भी ऐसी बात सामने आने पर कम धन में ही सन्तोष कर लेते थे। उनका नियम था कि अत्याचार तभी करते जब उसकी आवश्यकता होती। अकारण मार-छेड़ से वे भी बचते थे।

एक वार, एक गाँव के वड़े धनवान के यहाँ खवर आई कि अमुक दिन डाका डाला जायगा। धनवान ने उनसे समझौते का भी प्रयत्न किया, किन्तु समझौता न हो सका। अन्त में डाकुओं ने निश्चित तिथि में डाका डालने का निश्चय कर लिया।

उस धनवान पर एक योगिराज की बड़ी कृपा थी। समय कम था, इसलिए वह उनके पास स्वयं नहीं पहुँच सकता था, किन्तु वार-वार उसका ध्यान उन्हीं की ओर जा रहा था। वह सोचने लगा—'किसी प्रकार योगिराज यहाँ आजाँय तो इस घोर संकट से मेरी रक्षा हो सकती है।'

और उसे यह देख कर वहुत आश्चर्य हुआ कि जिस दिन डाका पड़ने वाला था, उसी दिन प्रातःकाल योगिराज वहाँ आगये और बोले 'तू ने मुझे याद किया, इसलिए साधना छोड़ कर यहाँ आना पड़ा है। तेरे संकट को भी मैंने ठीक प्रकार से जान लिया है, तू कुछ चिन्ता न कर।'

रात के वारह वजे गाते-वजाते हुए डाकुओं का दल गाँव की सीमा पर आ पहुँचा। उनके साथ जलती हुई मशालें प्रकाश के लिये थीं। धनवान के सेवकों ने उनके खाने-पीने की व्यवस्था करके कुछ धन भेंट करना चाहा, किन्तु सरदार ने कहा कि 'इतने से तो छौंक भी नहीं लगता। सेठ से कहना पाँच लाख रुपया अभी भेज दे, वरना उसके प्राणों की कुशल नहीं।'

सेठ ने योगिराज के समक्ष डाकू-सरदार की माँग रखी और वोला 'महाराज! इतना धन कहाँ से लाऊँ? मेरे पास तो है नहीं।

योगिराज ने कहा—'मैंने तुझे कहा न, कि तू चुपचाप बैठ। जो कुछ होगा देखा जायगा। डाकू दल लौट जायगा और तेरा वाल भी वाँका न होगा।'

मसझौता न होता देख सरदार क्रोधित हो गया। उसने अपने लोगों को आदेश दिया कि 'सेठ के बच्चे को मार डालो और उसका धन लूट लो चल कर। मगर ध्यान रखना—किसी स्त्री-बच्चे को मत सताना, नहीं तो बुरा परिणाम होगा।'

डाकू दल धनवान के घर पर आ गया। वह और उसका पूरा परिवार डर के कारण भीतर जा छिपा। मकान की पौली में योगिराज बैंठे थे और मुख्य द्वार खुला था।

सरदार ने दूर से ही मुख्य द्वार खुला देखा तो उसका कारण समझ में नहीं आया। वह सोचने लगा—'सभी धनवान रात्रि के समय दरवाजा तो बन्द रखते ही हैं, विशेष कर ऐसी स्थिति में जब डाकू दल आकर डाका डालने वाला हो। लगता है अवश्य कोइ विशेष बात है।'

सरदार ने अपने साथियों को सावधानी पूर्वक आगे बढ़ने का आदेश दिया। बोला—'अपने बचाव का जरूर ख्याल रखना। कहीं हम स्वयं ही किसी खतने में न फँस जाय।'

सरदार के नेतृत्व में डाकू दल आगे बढ़ा। तभी उसे भीतर से तीव्र कोलाहल की आवाज सुनाई दी। लगता था जैसे हजारों मनुष्य भीतर तैयार खड़े हैं मुकाबला करने के लिये। सरदार ध्यान से सुनने लगा, तभी उसे वहीं कहीं गोली चलने की आवाज सुनाई। उसने चारों ओर देखा—लगा, जैसे अनेकों आकृतियाँ हाथों में बन्दूक लिये छत पर खड़ी हैं।

तभी पीछे से चीख की आवाज सुनाई दी। एक डाकू भहरा कर धरती पर गिर गया था। इतने में ही दूसरा डाकू चीख पड़ा। किसी की समझ में नहीं आया कि क्या हो गया उन दोनों को देखा तो दोनों बेहोश पड़े थे।

और उसी समय तीसरा डाकू चीख कर गिरा। यह देख कर डाकुओं की हिम्मत टूट गई। पीछे से किसी ने आवाज दी—'सरदार ? बड़ा भारी खतरा है यहाँ तो, लगता है—भूत-प्रेतों की सेना घूम रही है। प्राण बचाने हैं तो भाग चलो तुरन्त।'

तब सरदार भी साहस खो बैठा। उसने पीछे की ओर कदम बढ़ाया और तीनों गिरे हुए साथियों को होश में लाने की चेष्टा की। तभी उन्होंने देखा—बहुत-सी मशालों का जुलूस चला आ रहा है उन्हीं की ओर। बस सभी भाग खड़े हुए। मूर्च्छित व्यक्तियों में से एक पकड़ लिया गया, जो रो-धोकर गाँव वालों की पकड़ ढीली होते ही भाग गया।

त्राटक सिद्ध से सम्मोहन शक्ति

एक स्वामीको एक रसानन्द योगी मिले। उनकी आयु कोई साठ-सत्तर वर्ष, हृष्ट-पुष्ट शरीर, लम्बा कद, दाढ़ी में बाल प्रायः सफेद- नेत्रोंमें चमक और वाणी में ओज दिखाई देता था।

वे जिसकी ओर मुसकान पूर्वक देखते, वही उनसे आकर्षित होजाता कुछ लोग तो उनसे वार्तालाप के लिये ही लालायित होजाते, कुछ लोग चाहते कि उनके पास ही बैठे रहें। वस्तुतः उनके तेजस्वी, किन्तु सौम्य व्यक्तित्व का प्रभाव सभी पर पड़ रहा था।

लोगों का कहना था कि उनकी आँखों में जादू है। यदि वे किसी रोगी को अपनी आँखों से कुछ क्षण भी अपलक दृष्टि से देख लें तो उसका रोग दूर हो जाता है, किसी को कृपा-पूर्ण दृष्टि से देखें तो उसकी मनोकामना पूर्ण हो जाती है। किसी को क्रोध पूर्वक देख लें तो उसका अनिष्ट हो जाता है।

महात्मा के एक कृपापात्र ने बताया कि महात्माजी को कभी किसी पर क्रोध करते देखा ही नहीं। वे सदैव प्रसन्न रहते और सभी को समान भाव से देखते हैं। उन्होंने हजारों व्यक्तियों का उपकार किया है अपनी दृष्टि-शक्ति से। उनके पास जो भी एक बार पहुँच गया, वही उनका भक्त बन गया।

वे महात्मा बहुत पहिले, बद्रीनाथ के उस मार्ग पर थे, जिस पर लोग पैदल चलते थे। उस समय तक बस-मार्ग चालू नहीं हुआ था। पैदल मार्ग में थोड़ी-थोड़ी दूर पर ही विश्राम आदि के लिये चट्टियां बनी थीं, जहाँ खाना-बनाने के लिये कच्चा सामान और ईंधन आदि भी मिल जाता था।

एक वृद्ध, जिन्होंने उन महात्मा जी का सान्निध्य प्राप्त किया था, कहते थे कि महात्माजी नित्यप्रति प्रातःकाल ही अपनी साधना किया करते थे। सूर्योदय के बाद कुछ अध्ययन कर लेते थे। लोगों से कम मिलना चाहते थे, किन्तु आने वालों को निराश भी नहीं कर पाते थे। जहाँ वे ठहरे हुए थे, वहाँ के आस-पास के पर्वतीय ग्रामीण स्त्री-पुरुष प्रायः उनके पास आते ही रहते थे।

महात्माजी किसी से कुछ लेते नहीं थे, कोई देना चाहते तो भी स्पष्ट रूप से इंकार कर देते। उनका कहना था कि 'जब मुझे कुछ आवश्यकता नहीं तो किसी से कुछ लूँ ही क्यों ?

और यह एक तथ्य भी था कि महात्माजी को कभी किसी ने कुछ खाते-पीते भी नहीं देखा। वस्त्र के नाम पर एक लँगोटी मात्र रहती थी भीषण ठण्ड के समय भी। जलाने के लिये लकड़ी की आवश्यकता होती थी, जिसे वे निकट के जंगल में जाकर स्वयं ही ले आते थे।

वृद्ध ने बताया कि जहाँ वे ठहरे हुए थे, वहाँ एक शिला खण्ड इस प्रकार से बाहर की ओर निकला हुआ था कि लोगों को डर था कि वह

कहीं गिर न पड़े। लोगों ने उनसे कहा भी कि कहीं अन्यत्र डेरा लगा लें तो उन्होंने वह स्वीकार नहीं किया। बोले—'चिन्ता न करो, जब तक मैं यहां हूँ, तब तक यह गिरेगा ही नहीं।'

महात्माजी जिस समय योग-साधन करते, एक दृष्टि उस शिलाखण्ड पर भी डाल लेते। इससे यह सिद्ध होता था कि वह शिलाखण्ड त्राटक सिद्धि से ही दृढ़ हो गया था। इसीलिये उसके गिरने की कोई सम्भावना नहीं थी।

वृद्ध ने यह भी बताया कि एक दिन रात्रि के समय एक विकराल सिंह कहीं से आगया। मैं भी उस समय महात्माजी की सेवा में था। सिंह मेरी ओर बढ़ने लगा। महात्माजी ने यह देख कर मुख से ही एक सीटी जैसा जोर का शब्द किया तो सिंह वहीं रुक गया और महात्माजी की ओर देखने लगा। महात्माजी ने उसकी आँखों में आँखें डाल दीं और कुछ क्षण बाद बोले—'वनराज! यहाँ जब भी आना हो समर्पण भाव से आना और उस शिलाखण्ड पर बैठना।'

पता नहीं शेर को क्या हुआ? वह तुरन्त वहाँ से पीछे लौटकर महात्माजी द्वारा संकेत से बताये हुए उसी शिलाखण्ड पर जा बैठा। मैं तो शेर की उपस्थिति से ही बहुत डर रहा था। किन्तु महात्माजी ने भय दूर करते हुए कहा—'डरो मत, सिंह तुमसे कुछ भी नहीं कहेगा। यदि उसके सामने कोई जोवित पशु भी डाल दिया जाय तो उसके लिये कोई खतरा नहीं होगा।

यह बात दूसरे दिन एक ग्रामीण ने भी सुनी कि रात को एक शेर आया था और वह महात्माजी के संकेत पर लौटकर रात भर उस शिला पर बैठा रहा, प्रातःकाल होने से कुछ पहिले ही गया है। शायद रात में फिर कभी आवे।

ग्रामीण अपनी उत्सुकता न रोक सका। वह उसी दिन बकरी का

एक बच्चा ले आया और मना करते हुए भी वहाँ छोड़ गया। वह देखना चाहता था कि शेर उसे मारता है या नहीं।

दो दिन बाद पुनः आया वह शेर। रात आधी के लगभग बीत चुकी थी। निकट ही बकरी का बच्चा खुला हुआ लेट रहा था। शेर आकर उसी शिला पर बैठा। बकरी के बच्चे की ओर भी उसने कुछ ध्यान न दिया। प्रातःकाल होने पर ग्रामीण ने सब बात सुनी तो स्वयं उनकी परीक्षा का विचार करने लगा।

एक दिन यही हुआ। ग्रामीण की उपस्थिति में शेर आया, किन्तु उस शिला से आगे नहीं बढ़ा। उसने किसी की भी ओर नहीं देखा। केवल कभी-कभी महात्माजी की ओर देखता और उनसे नजर मिलने पर और भी शान्त हो जाता।

कहते हैं कि वह शेर बड़ा उत्पाती और हिंसक था। चाहे जिस गाँव में पहुँच कर पशु आदि उठा लाता। कभी-कभी उसके द्वारा किसी-किसी मनुष्य के मारे जाने की बात भी सुनी जाती थी। इसलिये गाँवों के लोग रात में तो कभी घर से बाहर निकल ही नहीं पाते थे।

जब से शेर महात्माजी के पास आने लगा, तब से उसके द्वारा हिंसा किये जाने की कोई घटना नहीं सुनी गई। अब लोग रात के समय भी आवश्यक होने पर घर से बाहर निकल आते, उनका विश्वास था कि महात्माजी के प्रभाव से ही शेर ने हिंसा भाव छोड़ दिया है।

एक बार एक भक्त ने महात्माजी के उस प्रभाव का रहस्य पूछा तो वे बोले—'भाई! यह सब योग-साधन से ही सम्भव है। मैं तो कुछ भी नहीं हूँ, बड़े-बड़े योगी पुरुप हैं संसार में जो योगसिद्धि के बल पर चाहे जो कुछ कर सकते हैं।'

भक्त ने जिज्ञासा की—'कोई सरल युक्ति बताइये।' इस पर महात्माजी ने कहा—'त्राटक साधना सब से सरल है। इसमें साधक की नेत्र

शक्ति इतनी अधिक विकसित हो जाती है कि आँखों से आँखें मिलाने पर बड़े-बड़े शूरवीर तथा क्रूर स्वभाव वाले भयंकर प्राणी भी वश में हो जाते हैं। वस्तुतः आँखों में महती शक्ति विद्यमान है, किन्तु लोगों को इसका ज्ञान नहीं है। यदि अभ्यास के द्वारा इसे तीव्र या प्रकट कर लिया जाय तो वह सामर्थ्य प्राप्त हो जाती है, जिसकी पहिले कभी कल्पना भी नहीं की होगी।

त्राटक सिद्धि से स्वभाव-परिवर्तन

त्राटक सिद्धि के द्वारा सभी कुछ सम्भव है। वृन्दावन के निकट ही पहिले एक साधु रहते थे कोई उन्हें सिद्ध बाबा कहते तो कोई चमत्कारी बाबा। कहते हैं कि वे बहुत ही सौम्य स्वभाव के थे और एकान्त में रहना पसन्द करते थे। वे नहीं चाहते थे कि लोग उनके पास आवें, इसलिये कभी-कभी तीर्थाटन को निकल जाते, जिससे लोगों का आना-जाना स्वभावतः रुक जाता।

एक बार, एक व्यक्ति ने उन्हें अपने घर चलकर भोजन करने का निमन्त्रण दिया। बाबाजी किसी के घर नहीं जाते थे, इसलिये उन्होंने मना कर दिया। अब तो वह व्यक्ति बहुत रुष्ट हुआ, बोला—'तुमने मेरे मान-सम्मान पर भी ध्यान नहीं दिया। इतना अहंकार है तुम्हें कि मेरे घर भी नहीं चलना चाहते ?'

बाबा ने कहा—'भाई ! मैं कभी किसी के घर नहीं जाता। तुमने कभी देखा हो तो बताओ।'

'न देखा सही' उसने कहा—'मेरे घर तो चलना ही होगा। न चलोगे तो मैं भी तुम्हें देख लूँगा।'

बाबा ने जाना स्वीकार न किया। बोले—'तुम मेरे सामने बैठो

कुछ क्षण, फिर समझ लोगे मैं सत्य हूँ या नहीं ? फिर भी तुम मुझे झूठा समझो तो चलूँगा तुम्हारे साथ।'

वह व्यक्ति कुछ शान्त हुआ और उनके कहने के अनुसार सामने ही बैठ गया। बाबा बोले—'मेरी ओर देखो।' उसने देखा बाबा की ओर तो नजर से नजर मिल गई। पता नहीं, क्या हुआ कि वह व्यक्ति बाबा के चरण पकड़ कर क्षमा माँगने लगा। बोला—'मुझसे बड़ी भूल होगई, क्षमा कर दीजिये।'

वह बहुत क्रोधी स्वभाव का था, उस दिन से उसका क्रोध ही समाप्त हो गया। उसके बाद कभी किसी ने उसे क्रोध करते नहीं देखा। कहते है कि बाबा ने बहुत-से क्रोधी स्वभाव वाले व्यक्तियों को क्रोध रहित, शान्त बना दिया था।

एक बार, एक किसान उनसे रुष्ट होकर लाठी ही निकाल लाया। किन्तु बाबा की दृष्टि मिलते ही लाठी फेंककर उनके चरणों में आगिरा। जहाँ दूसरे लोग परस्पर लड़ते थे, वहाँ यदि बाबा किसी प्रकार पहुँच जाते तो वे लड़ना भूल कर बाबा को प्रणाम करने के लिये दौड़ पड़ते और इस प्रकार उनकी लड़ाई ही समाप्त हो जाती।

धधकते कोयले की अनुभूति

बात पुरानी पड़ गई है। व्रज क्षेत्र में भी अनेकानेक सिद्ध सन्त, महात्मा तथा योगी पुरुष हो चुके हैं। गोवर्धन की तलहटी में एक सिद्ध पुरुष स्वामी पूर्णानन्द कुछ दिन के लिये आकर ठहरते थे। वे एक स्थान पर अधिक दिनों तक नहीं ठहरते थे। चार दिन यहां तो चार दिन वहाँ। अधिकतर तो दो-एक दिन ही ठहरते थे। उनका कहना था कि एक स्थान पर अधिक दिन रहने से वहाँ के लोगों से जान-पहिचान बढ़ने

लगती है, जिससे राग-द्वेष का उत्पन्न होना भी स्वाभाविक है। और योग-साधकों को राग-द्वेष से बचना आवश्यक हैं।

लोग उन्हें 'टोटकी बाबा' भी कहते थे। उनका विश्वास था कि यह बाबा टोटका आदि करने के कारण टोटकी कहलाने लगे हैं। इसी बाबा टोटका आदि करने के कारण टोटकी कहलाने लगे हैं। इसी विश्वास के कारण बहुत-से लोग, स्त्री-पुरुष उनके पास आने लगे। सभी चाहते कि बाबा बीमारी से बचाने, नजर से बचाने, धन प्राप्त कराने, मुकदमा जिताने आदि कार्यों में टोटका द्वारा हमारी सहायता करें। किन्तु बाबा तो टोटका आदि से परे ही रहते थे तो टोटका कैसे करते ?

वस्तुतः वे त्राटक सिद्ध योगी थे, इसलिये उनका नाम 'त्राटकी' पड़ा होगा, जो कि अपभ्रंश रूपमें बोलने के कारण 'टोटकी' बन गया होगा। त्राटक में यद्यपि क्षुद्र टोटके तो नहीं हैं, किन्तु सिद्धि इतनी सबल है कि उसके समक्ष टोटकों की भी नहीं चल सकती।

बाबा का एक भक्त था, जो उनसे तब भी कुछ चमत्कार दिखाने का आग्रह कर चुका था, जब वे पहिली बार आये थे। इस बार उसने और भी अधिक आग्रह पूर्वक निवेदन किया कि 'बाबा ! अपनी सिद्धि का कुछ तो चमत्कार दिखाइये ही हमें।

बाबा ने अत्यधिक आग्रह देखकर समझ लिया कि भक्त मानेगा नहीं जब तक कुछ देख न लेगा। उन्होंने कहा 'यदि नहीं मानता. कुछ देखना ही चाहता है तो हाथ में एक बड़ा कंकड़ ले ले और फिर देख कि चमत्कार होता क्या है ?

भक्त ने कंकट ले लिया हाथ में। महात्माजी ने उससे कहा—साव-धान हो, देख तेरे हाथ का कंकड़ गर्म होता चला जा रहा है। अब तू कहे तो इसे और भी अधिक करूँ अथवा पुनः शीतल बना दूँ ?

उसने कहा—'और गर्म होने दीजिये। मुझे देखना है कि गर्मी का तापमान कितना अधिक हो सकता है।'

भक्त की बात सुनकर महात्माजी यद्यपि कुछ असन्तुष्ट से हो रहे थे। फिर भी सँभल कर बोले—'देख, कंकड़ कितना गर्म हो गया है ? अब तो धधकते हुए कोयले के समान गर्म हो जाना चाहिये। इसकी गर्मी तेजसी बढ़ रही हैं। अब तुम्हें हथेली पर रखे रहना असह्य प्रतीत होने लगा है, हथेली जलने लगी है।'

और सचमुच कंकड़ की गर्मी बढ़ते-बढ़ते असह्य होती जा रही थी। कंकड़ भक्त के हाथ से छूट गया और जहाँ कंकड़ ले रखा था वहाँ की हथेली दग्ध हो गई थी। उस पर फफोड़ा पड़ गया था।

भक्त बोला—'महाराज ! असह्य जलन हो रही है हथेली में, अब क्या करूँ ?' वे बोले—'घर जाकर जले की दवा लगाना, ठीक हो जायगा जल्दी ही।'

भक्त व्याकुल हो रहा था—'आपने जला दिया है मुझे, अब आप ही ठीक कीजिये इसे। घर पर तो कोई भी दवा नहीं है, तब क्या इसी प्रकार तड़पता रहूँगा ?'

महात्माजी ने कहा—'तू ने व्यर्थ ही हठ की। वस्तुतः योग-चमत्कार प्रदर्शन की वस्तु नहीं है। यदि उसका प्रदर्शन किया जाना है तो वह तो अधिक कष्टकर हो जाती है। फिर भी देख, मैं कुछ उपाय करता हूँ तेरी पीड़ा-निवारण का। हथेली दिखा मुझे।'

भक्त ने हथेली फैला दी उनके सामने। महात्माजी हथेली को आँखें गढ़ा कर देखा। उसकी जलन धीरे-धीरे कम हो रही थी। महात्माजी ने अन्त में कहा—'कहाँ है तेरी हथेली में छाला, मुझे तो कहीं कोई चिह्न ही दिखाई नहीं देता।'

वह भक्त क्या, और भी जो कुछ व्यक्ति वहाँ बैठे थे,इस बार उसकी हथेली को देखकर आश्चर्य चकित हो गये। अब उस पर कोई छाला, फफोला या घाव आदि का चिह्न ही नहीं था,जबकि सभी ने पहिले वहाँ फफोल पड़ा हुआ देखा था।

उन महात्मा से सम्बन्धित और भी अनेक चमत्कार पूर्ण बातें कुछ बड़े-बूढ़े लोग अब भी सुनाते हैं। उनका कहना है कि महात्मा जी के चमत्कार हमने स्वयं देखे थे। प्रथम तो वे कोई भी चमत्कार दिखाने को सहमत नहीं होते थे, किन्तु लोगों के अधिक आग्रह को भी नहीं टाल पाते थे। उनकी आयु भी बहुत अधिक बताई जाती थी, किन्तु वे उतनी आयु के प्रतीत नहीं होते थे।

त्राटक से प्रसव वेदना की शान्ति

एक बार हरिद्वार के उस पार एक साधु स्वामी प्रकाशानन्द से परिचय हुआ। उसके विषय में लोगों का कहना था कि वह रोगों को दूर करने में समर्थ है। एक पंडितजी थे हरिद्वार में, जिनसे उस साधु का परिचय बताया जाता था।

वह साधु प्रायः चण्डी और अंजनी के दर्शनार्थ जाता रहता था पण्डित जी का कहना था कि एक बार वह उसी पर्वत शिखर पर कोई अनुष्ठान भी कर चुका है, जिसके फल स्वरूप उसे अभूतपूर्व सिद्धि प्राप्त हो चुकी है।

उस साधु के देखने मात्र से रोग दूर हो जाता था। लोगों का कहना था कि उसने सैकड़ों रोगी दृष्टि मात्र से ही रोग मुक्त कर दिये हैं। वह कभी कोई औषधि नहीं बताता था किसी को।

एक दिन एक व्यक्ति ने उससे कहा कि मेरी पत्नी प्रसव वेदना से बहुत छटपटा रही हैं। वैद्यजी ने कई दवाएँ दी हैं उसे किन्तु किसी से लाभ नहीं हुआ। वरन् पीड़ा बढ़ ही रही है क्षण-क्षण पर। उसका इस प्रकार व्याकुल होना देखा भी नहीं जाता।

साधु ने कहा—'उसे किसी डाक्टर के पास ले जाओ, तभी आराम होगा। मैं क्या कर सकता हूँ इस मामले में ?' किन्तु लोगों ने

कहा कि आप एक बार देख तो लीजिये उसे, शायद कुछ लाभ हो ही जाय।'

लोगों के अधिक आग्रह पर जाना पड़ा उसे। उसके घर पर जा कर देखा तो वास्तव में गर्भवती बुरी तरह तड़प रही थी। दाई आदि स्त्रियाँ बैठी हुई कह रही थीं कि इसके भीतरी भाग में कुछ खराबी है, इसीलिए इतना कष्ट हो रहा है। यह स्थिति खतरनाक भी हो सकती है।

साधु ने स्त्री के उदर पर दृष्टिपात किया। देखते-देखते ही दर्द गायब होने लगा। उसकी छटपटाहट मिट गई पूर्ण रूप से। साधु बाहर निकल आया तो घर के लोगों ने उसे फल-दूध आदि की भेंट द्वारा प्रसन्न करना चाहा, किन्तु उसने कुछ भी स्वीकार न किया। उसी समय भीतर से खबर आई कि प्रसव सुख पूर्वक हुआ है और लड़के ने जन्म लिया है।

घर भर में प्रसन्नता छा गई। सभी साधु बाबा का आभार मानने लगे। क्यों कि प्रत्यक्ष ही था कि गर्भाशय में खराबी की जो शंका व्यक्त की जा रही थी, वह भी ठीक हो गई और पीड़ा भी मिट गई। पता नही यह कार्य उन दिनों अस्पताल में ठीक प्रकार से हो भी सकता था या नहीं ?

त्राटक और इच्छाशक्ति की प्रबलता

त्राटक में सम्मोहन पूर्ण रूप से निहित है, चाहे वह हिप्नोटिज्म के रूप में हो, चाहे टेलीपैथी के रूप में। टेलीपैथी की क्रिया विचारों के सुदूर संचार में बहुत प्रभावकारी होती है।

वस्तुतः इस प्रकार की सभी सिद्धियों के द्वारा इच्छाशक्ति को दृढ़ किया जा सकता है। बिना किसी विघ्न बाधा के सम्मोहन शक्ति का

संचार होता है और भेजा हुआ सन्देश लाखों किलोमीटर तक सहज में ही पहुँच जाता है। वस्तुतः टेलीपैथी की क्रिया उतनी ही अधिक प्रभावशाली होगी, जितनी कि इच्छा शक्ति की प्रबलता।

एक बार की बात है—एक गृहस्थ परिवार हरिद्वार, ऋषिकेश, स्वर्गाश्रम आदि के भ्रमणार्थ गया था स्वर्गाश्रम से ऊपर कुछ किलोमीटर की चढ़ाई चढ़ने पर नीलकण्ठ महादेव का एक सुरम्य स्थान मिलता है। वहाँ के नैसर्गिक सौन्दर्य और शिवजी के प्रभाव की प्रशंसा सुनकर वे सब लोग वहाँ गये, किन्तु लौटते समय एक युवक उनसे बिछड़ गया।

सायंकाल हो चुका था, सूर्य अस्ताचल में जाछिपे थे, भूखे-प्यासे युवक को मार्ग दिखाई नही दे रहा था, अन्धकार बढ़ता जाता था। युवक ने एक पगडंडी पर बढ़ते-बढ़ते देखा कि मार्ग बन्द है और सामने के पर्वत पर रीछों का झुण्ड उछल-कूद कर रहा हैं। इससे युवक और भी भयभीत हुआ तथा घबरा गया।

तभी उसने देखा—एक शिला खण्ड पर कोई महात्मा बैठे हैं, जिन्होंने संकेत से युवक को अपने पास बुला लिया उनके पास पहुँच कर उसने देखा कि उसी समय एक दोना आकर गिरा उसके सामने, जिसमें सत्तू के बने दो लड्डू रखे थे। ऊपर दृष्टि उठाई तो एक तोता आकाश में उड़ रहा था।

महात्मा जी के संकेत पर युवक ने वे लड्डू खाये और उनके कमण्डलु से शीतल पानी पी लिया। इससे उसे बड़ी सान्त्वना मिली। दो लड्डुओं में ही उसकी भूख समाप्त हो चुकी थी।

तत्पश्चात् युवक ने महात्मा जी से कुछ पूछा तो वे बोले नहीं, वरन् संकेत से ही उत्तर दिया।किन्तु युवक उन संकेतों को ठीक प्रकार से समझने में असमर्थ रहा।

तभी एक अन्य साधु वहां आया और उसने पहिले वाले महात्मा जी के चरण स्पर्श पूर्वक प्रणाम किया। फिर वह युवक से बोला—'तुम गुरुदेव से जो कुछ जानना चाहते थे वह मुझसे पूछो। में गुरुदेव की आज्ञा से यहाँ आया हूँ। गुरुदेव मौनव्रती है, इसलिए तुम्हारी बात का उत्तर संकेत में ही दे सकते थे। किन्तु जब तुम्हारी समझ में संकेत नहीं आये, तब उन्होंने मुझे यहाँ आने का आदेश दिया।'

युवक को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने सोचा कि यहाँ गुरुदेव के अतिरिक्त कोई अन्य व्यक्ति है ही नहीं, फिर इस साधु को बुलाने कौन गया?'

उसने यह शंका आगंतुक साधु के समक्ष रखी तो उसने कहा 'यह सबल इच्छा शक्ति का ही प्रभाव है। गुरुदेव ने त्राटक द्वारा सबल हुई अपनी इच्छा शक्ति के द्वारा ही मुझे तुरन्त यहाँ पहुँचने का आदेश दिया, जिसे पाते ही मैं बहुत दूर होता हुआ भी क्षण भर में यहाँ आ गया हूँ।'

युवक का आश्चर्य और भी बढ़ा—'आप बहुत दूर होते हुए भी क्षण भर में यहाँ कैसे आ गये?'

साधु ने कहा—'इच्छा शक्ति प्रबल हो तो सभी कुछ सहज सम्भव है युवक! उसी के अभ्यास से मैं डेढ़ सौ वर्ष की आयु का होते हुए भी अभी प्रौढ़ दिखाई देता हूँ।

युवक के गुरुदेव की आयु पूछने पर साधु ने बताया—'गुरुदेव की आयु तो तीन सौ वर्ष से भी अधिक है।'

युवक अभी आश्चर्य में ही पड़ा था कि शिष्य साधु ने कहा 'गुरुदेव की आज्ञा है कि तुम्हें तुरन्त ही स्वर्गाश्रम में पहुँचा दिया जाय। वहाँ तुम्हारे माता-पिता और कुछ पर्वतीय मार्ग-दर्शक व्यग्रता से तुम्हारी खोज कर रहे हैं।' . . . .

यह सुन कर युवक ने पूर्व महात्माजी को प्रणाम किया और शिष्य साधु के साथ चलने लगा। तभी उसने कहा कहा—'अपनी आँखें बन्द करके बैठ जाओ।'

युवक ने बैठ कर आँखें बन्द कर लीं। क्षण भर में ही उसे सुनाई दिया 'आँखें खोलो, अब तुम स्वर्गाश्रम में हो।'

उसने आँखें खोलीं तो अपने को उसी कमरे के पास पाया, जिसमें वह अपने परिवारीजनों के साथ ठहरा हुआ था। किन्तु यह देख कर उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा कि वह साधु भी वहाँ नहीं था, जिसने आँखें खोल लेने को कहा था।

बिन्दु त्राटक से रोग-शमन

त्राटक साधना रोग-शमन में बहुत ही सहायक होती है। त्राटक सिद्ध जिस किसी रोगी को रोग-निवारण के उद्देश्य से दृष्टि भर कर देख ले, उसका रोग शीघ्र ही दूर हो जाता है और उसे किसी भी प्रकार की औषधि आदि की अपेक्षा नहीं होती।

आधुनिक समय में प्रचलित हिप्नोटिज्म और मैस्मरेज्म की विधियां त्राटक साधना का ही एक प्रकार है। हिप्नोटिज्म में प्राणियों को सम्मोहित करने की शक्ति होती है, जो त्राटक-विधि के द्वारा ही उत्पन्न होती है। क्योंकि इस शक्ति का मुख्य द्वार आँखें ही हैं, उन्हीं में वह जादू भरा है, जिसका परिणाम सम्मोहन है।

अमेरिका के एक प्रसिद्ध विशेषज्ञ प्रो० मैक्डागाल ने इस शक्ति से होने वाले परिणामों का सावधानी पूर्वक परीक्षण करके यह निष्कर्ष निकाला कि पूर्ण रूप से सामान्य स्थिति वाले स्वस्थ मनुष्यों के सौ में से नब्बे से भी अधिक भाग को इसके द्वारा सम्मोहित किया जा सकता है।

इसका मुख्य कारण यह है कि मानव शरीर के अंग-प्रत्यंग में विद्युत्-ऊर्जा के साथ रासायनिक पदार्थ भी पर्याप्त मात्रा में है और रक्त-संचार की गति इन सभी को गतिशील बनाये रखती है। उसी से शरीर में विद्युत्-उत्पादन का कार्य भी अनवरत रूप से चलता रहता है।

किन्तु उससे प्राप्त ऊर्जा का सदुपयोग तभी हो सकता है जब मनुष्य उसके लिए कोई प्रयत्न, कोई साधना, कोई अभ्यास करता रहे। उसके लिये यदि शारीरिक स्वास्थ्य ठीक रहे तो, परिणाम भी शीघ्र व्यक्त हो सकता है। क्योंकि शरीर स्वस्थ रहने की स्थिति में ही विद्युत् शक्ति चुम्बकीय प्रभाव कारण बनती है।

वही चुम्बकीय शक्ति जब विशेष अवस्था में होती है, तभी उससे विद्युत्-ऊर्जा उत्पन्न हो पाती है। शायद आप 'कायल' के विषय में जानते हों, जो कि बिजली के तारों का एक गोल गुच्छा जैसा होता है। उसे मध्य में रखकर उसका एक सिरा विद्युत्-मापक यन्त्र (वोल्ट मीटर) से लगा कर और चुम्बक को शीघ्रता से कुछ ऊपर उठाकर वहीं रख दें तो वोल्ट मीटर की सुई विद्युत्-उत्पादन को शीघ्र बता देगी। परन्तु इसकी मात्रा बहुत हल्की रहेगी। इसमें ध्यान देने योग्य तथ्य यह हैं कि क्वायल और चुम्बक का परस्पर में स्पर्श न होते हुए भी बिजली उत्पन्न होजाती है।

डॉ० मेस्मर ने इसी आधार पर यह निर्णय लिया कि प्राणियों की आन्तरिक चुम्बक शक्ति विद्युत् उत्पन्न करने में समर्थ है, इसलिए वे एक चुम्बक अथवा चुम्बक शक्ति से परिपूर्ण वृक्ष रखकर उसके चारों ओर अपने रोगियों को गोलाकार रूप में बैठा देते या खड़ा करते थे। इस प्रकार की स्थिति में एक-दूसरे में पारस्परिक सम्पर्क होने के कारण जो विद्युत् उत्पन्न होती, उसी से रोगी रोग-मुक्त हो जाते थे।

त्राटक शक्ति से सफल ऑपरेशन

त्राटक शक्ति के द्वारा रोगों का ही निवारण नहीं होता, वरन् बड़े बड़े आपरेशन भी सफलता पूर्वक किये जा सकते हैं। अमेरिका आदि पाश्चात्य देशों में अनेक शल्य चिकित्सक इस विधि के द्वारा रोगी को अचेत किये बिना ही ऑपरेशन करने में सफल रहे हैं।

वहाँ के अनेकों दन्त-चिकित्सक दांत निकालने में किसी प्रकार के इन्जेक्शन आदि का प्रयोग नहीं करते, वरन् रोगी को सम्मोहित करके ही उसके दाँत उखाड़ देते हैं और ऐसा रते समय रोगी को कष्ट की कुछ भी अनुभूति नहीं होती।

वात रोगों में अत्यन्त हितकर

सम्मोहन की इस विधि का प्रयोग अनेक प्रकार की शारीरिक वेदनाओं में भी किया जाता है। सिर-दर्द, पेट-दर्द, सर्वांग दर्द आदि इसके द्वारा मिनटों में छू मन्तर हो जाते हैं। यदि प्रसव काल में गर्भवती को वेदना न होने की भावना दी जाय तो उसे प्रसव वेदना नहीं होती। शारीरिक कमजोरी, शुष्कता आदि को दूर करने के लिये उस प्रकार की भावना दी जाती है।

वात रोग से पीड़ित व्यक्तियों के लिये तो यह एक प्रकार का वरदान ही है। इस विधि के द्वारा बेकाम हुए अंगों को सहज ही क्रियाशील बनाया जा सकता है। किन्तु लाभ का शीघ्र य देर से होना इस बात पर निर्भर है कि रोग साध्य, दुःसाध्य अथवा असाध्य, किस प्रकार का है। क्यों कि दुःसाध्य या असाध्य रोग के ठीक होने में वर्षों तक लग सकते हैं, जब कि नवीन तथा सु साध्य रोग शीघ्र ही दूर हो जाता है।

मानसिक रोगों से मुक्ति

सम्मोहन के द्वारा मानसिक रोगों के उपचार भी सफलता पूर्वक किये जा सकते हैं। उन्माद, अपस्मार, हिस्टीरिया आदि रोगों में तो इससे आशातीत लाभ होता देखा गया है। डॉ० चारकाट आदि पाश्चात्य विद्वानों के मत में ऐसा कोई भी मानसिक रोग नहीं है, जो सम्मोहन शक्ति के द्वारा ठीक न किया जा सके। क्योंकि सम्मोहन शक्ति रोगी के मस्तिष्क पर सीधा प्रभाव डालती है उन्मादादि रोगों का मस्तिष्क से ही सीधा सम्बन्ध है।

डॉ० चारकाट के अतिरिक्त कुछ अन्य पाश्चात्य विशेषज्ञ भी मानसिक रोगों की निवृत्ति में सम्मोहन शक्ति के प्रयोग को अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं। डॉ० फ्रायड प्रभृति मनोवैज्ञानिक भी इस पद्धति के द्वारा अनेकानेक रोगियों को रोगमुक्त करने में सफल रहे हैं।

डॉ० मेस्मर ने भी हिस्टीरिया प्रभृति रोगों को दूर करने में बहुत सफलता प्राप्त की थी। त्राटक की आधुनिक विधि मेस्मेरिज्म और हिप्नोटिज्म के प्रवर्तक डॉ० मेस्मर ही माने जाते हैं। कहते हैं कि वे योग चिकित्सा और ज्योतिष के भी विद्वान् थे। उनका निष्कर्ष था कि मनुष्य शरीर में सूर्य, चन्द्रमा और नक्षत्र सदैव कार्यरत रहते हैं जिन पर चुम्बक का प्रभाव पड़ना ही चाहिए। डा० मेस्मर का यह तर्क भारतीय योगियों के इस सिद्धान्त की पुष्टि करता है कि इडा और पिंगला नाड़ियाँ चन्द्रमा और सूर्य की प्रतीक हैं। यही नाड़ियां प्राणायाम की क्रिया में प्राणशक्ति को सबल बनाने का बहुत बड़ा कार्य पूरा करती हैं। इन नाड़ियों की सबलता की पृष्ठभूमि पर ही समस्त योग-साधनाएँ, जिनमें त्राटक-साधना भी सम्मिलित है, खड़ी हैं।

डॉ० मेस्मर ने अपने कार्य को सुचारु रूप से चलाने के लिए चुम्बक शक्ति से सम्पन्न एक प्रयोगशाला का निर्माण कराया, जिसमें मंद

प्रकाश के साथ सङ्गीत की सुमधुर ध्वनि सदा चलती रहती और साथ ही किसी इत्र की मनोहर सुगन्ध भी फैली रहती। रोगी को इसी प्रकार के वातावरण में रखा जाता, जिससे वह अपने रोग को भूल कर उसी के प्रभाव में तन्मय हो जाता। यही कारण था कि वहाँ जाने वाले रोगियों की रोग-निवृत्ति में अधिक विलम्ब नहीं होता था।

सन् १७८७ ई० में डॉ० मेस्मर के शिष्य मार्क्विस चेस्टनेट द पाइ-सेगर ने अपने गुरु की खोज पर अनेकानेक प्रयोग किये, जिससे वैज्ञानिक जगत् बहुत प्रभावित हुआ और उन प्रयोगों से एक निष्कर्ष यह भी निकला कि यदि हिप्नोटिक शक्ति के प्रयोग द्वारा रोगी को निद्रित कर दिया जाय तो उससे मेस्मेरिज्म द्वारा की जाने वाली चिकित्सा जैसे ही परिणाम होंगे।

कामशक्ति की अपेक्षानुसार वृद्धि

सम्मोहन शक्ति वाला यह विज्ञान कामशक्ति बढ़ाने में भी बहुत प्रभावशाली है। इसके प्रयोग द्वारा वे भी पूरे मर्द बन गये जिन्हें इन्द्रिय हर्ष नहीं होता था। शीघ्रक्षरण के बहुत-से रोगियों को भी इसके द्वारा अप्रत्याशित रूप से लाभ हुआ है।

जो पुरुष स्त्री के समीप जाने तक में भी झिझकते थे, उनकी झिझक दूर करने भी इस विज्ञान ने बड़ी सहायता की। अनेकों अनमेल जोडे इसके द्वारा स्वस्थ होकर अपनी गृहस्थी की गाड़ी प्रेम पूर्वक चला रहे हैं।

कण्ठ रोगों का दूर होना और कण्ठ स्वर खुलना

इसके प्रयोग द्वारा कण्ठ के अनेक रोग दूर किये जा सकते हैं। एक भारतीय त्राटक-सिद्ध योगी के अनुसार शरीर में उत्पन्न होने वाला कोई भी रोग मानसिक दोष का ही फल है मुख्य रूप से। चित्त के अशान्त रहने से अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं और यदि उस अशान्ति को दूर कर दिया जाय तो रोग भी स्वतः ही दूर हो जाता है।

उनका कहना था कि उन्होंने अनेकों कण्ठ-रोग-पीड़ित रोगियों को ठीक करने में सफलता प्राप्त की है। इनमें अधिकाँश रोगी ऐसे थे, जिनके गले में दर्द रहता तथा स्वर भंग हो गया था। उन्हें भर नजर देख कर यह भावना दी जाती थी कि तुम्हारा कण्ठ अब पीड़ा-रहित, स्वस्थ हो रहा है और कण्ठ स्वर भी मधुर होता जा रहा है। इसके साथ ही उनके कण्ठ पर विशेष रूप से दृष्टिपात किया जाता था।

उनका यह भी कहना था कि जिन कण्ठ रोगियों को औषधि सेवनादि उपचारों से भी लाभ न हो सका, इस उपचार के द्वारा सहज ही लाभ हो गया। टॉन्सिल वृद्धि की एक रोगिणी को चित्सिक ने ऑपरेशन का परामर्श दिया था, किन्तु रोगिणी ऑपरेशन के नाम से ही घबराती थी, इसलिए फिर उस चिकित्सक के पास नहीं गई। त्राटक विधि द्वारा दी गई भावना और दृष्टिपात से वह भी ठीक हो गई।

चर्मरोगों का पूर्ण रूप से नष्ट होना

उन्हीं योगिराज का कहना था कि यह विधि चर्मरोगों को दूर करने में भी बहुत उपयोगी है। जो कार्य लेप, मरहम आदि के द्वारा नहीं हो पाता, वह दृष्टिपात मात्र से हो सकता है।

वस्तुतः चर्म रोगों की उत्पत्ति में भी मानसिक विकारों का बहुत बड़ा योग रहता है। उनका कथन था अपने प्रयोग द्वारा उन्होंने कुष्ट रोग से पीड़ित व्यक्तियों तक को लाभ पहुँचाया है। सफेद दाग के भी अनेकों रोगी ठीक किये हैं।

वस्तुतः नेत्रों में जो विद्युत्-ऊर्जा विद्यमान रहती है. दृष्टिपात के द्वारा त्वचा पर उसका सीधा प्रभाव पड़ता है। उधर चर्म रोगों का कारण शरीरस्थ वह गर्मी होती है जो रक्त को प्रभावित करके उसमें दोष उत्पन्न कर देती है। वही दोष चर्मरोग के रूप में त्वचा पर उभर आते हैं। यही कारण है कि नेत्रों द्वारा निकलने वाली मानवी ऊर्जा, आधुनिक यन्त्रों द्वारा निकलने वाली विभिन्न प्रकार की किरणों से भी अधिक काम करती हैं, जिससे चर्म रोगों का निवारण सहज ही हो सकता है।

क्षय-रोग को दूर करने में भी उपयोगी

योगिराज का यह भी कथन था कि सामान्य रोगों की तो बात ही क्या, क्षय-रोग का भी इसके द्वारा निवारण हो सकता है। क्योंकि क्षय की उत्पत्ति एक प्रकार के जीवाणु से होती है। वही जीवाणु रोगी की धातुओं को प्रभावित कर शरीर को रोगी बना देता है।

दृष्टिपात यदि गहरा हो तो वह त्वचा को भी भेद कर भीतर प्रविष्ट कर जाता है, जिसके प्रभाव से क्षय के कीटाणुओं का नाश होने लगता है। फेंफड़ों के क्षय में दृष्टिपात रोगी के फेंफड़ों पर किया जाता है, जिससे फेंफड़ा सबल और रोग-रहित होने लगता है। दोनों फेंफड़ें क्षय ग्रस्त होते हैं तो उन दोनों पर ही नजर डाली जाती है।

फ्लूरिसी वालों के लिये भी यह विधि उपयोगी होती है। क्योंकि नेत्रों से निकली हुई ऊर्जा वहाँ पड़ती है तो फेंफड़ों में भरा पानी

सूखने लगता है। आँत आदि के क्षय रोग में किया जाने वाला दृष्टि-पात उन-उन अंगों को झटकों के द्वारा इतना झकझोर देता है कि उनकी निष्क्रियता शीघ्र ही दूर होने लगती और गतिशीलता लाने लगती है।

उदर रोगों की निवृत्ति

उदर रोगों के शमन में भी इसके द्वारा बहुत लाभ उठाया जा सकता है। एक भारतीय सम्मोहक (हिप्नोटिस्ट) ने अपने प्रयोगों के द्वारा अनेक ऐसे रोगियों को ठीक किया, जिन्हें उदर-रोग से परेशानी थी। और जो औषधोपचार से लाभ न उठा सके थे।

उदर रोग अनेक प्रकार के हैं, जिनकी उत्पत्ति प्रायः खान-पान की की गड़बड़ी से होती है। इन रोगों में कब्ज बहुत प्रमुख है, जो अधिकांश मनुष्यों को बना रहता है,किन्तु वे लोग इसे कोई बीमारी नहीं समझते।

कब्ज के अतिरिक्त अजीर्ण, मन्दाग्नि, अपचन, पेट में दर्द, भारीपन, अफरा, जी मिचलाना आदि लक्षण भी उदर रोग के ही अन्तर्गत आते हैं। यह सभी रोग सम्मोहन शक्ति के प्रभाव से शीघ्र ही दूर किये जा सकते हैं।

हमारे देश में अनेकों योग-साधक अपने साधनाभ्यास के बल पर ही सदा निरोग रहते थे उन्हें कभी किसी प्रकार के उदर रोग का सामना नहीं करना होता था। वस्तुतः योग-साधन के अगभूत त्राटक और हिप्नोटिज्म की पद्धतियों में बहुत कुछ समानता है। वरन् यह कह सकते हैं कि हिप्नोटिज्म त्राटक का ही एक छोटा और सरल रूप है, जिसमें त्राटक जैसी अधिक शक्ति तो नहीं होती, किन्तु साधारण शक्ति का समा-वेश अवश्य रहता है। भारतीय योगी जिस योगाभ्यास के द्वारा सम्मोहन

शक्ति प्राप्त करते हैं, हिप्नोटिज्म के साधक को उसी प्रकार के अभ्यास की आवश्यकता आंशिक रूप में रहती है।

अभ्यास चाहे आंशिक हो या अधिक, जब उसमें दृढ़ता आती हैं, तब आंशिक भी आंशिक नहीं रहता। वह भी पूर्णता की ओर बढ़ता है। योगियोंने इस रहस्यको बहुत पहिले ही ठीक प्रकार से समझ लिया था। और इसीलिये वे अभ्यास में अधिक समय तक लगे रहते थे। यही एक ऐसा कारण था, जिसे अद्वितीय कह सकते हैं, क्योंकि उनकी अद्भुत शक्ति की समानता करने में कोई भी आधुनिक साधक सफल नहीं होपाता।

सभी प्रकार की साधना परिश्रम चाहती है, किन्तु आज का साधक परिश्रम से बचना चाहता है। वह यही चाहता है कि परिश्रम न करना पड़े, किन्तु छोटी से छोटी क्रिया भी तुरन्त फलवती हो जाय।

हाथ के स्पर्श मात्र से रोग नाश

दक्षिण जर्मनी के एक पादरी फादर गैसनर ने रोगियों को निरोग करने की दिशामें एक अपूर्व कार्य किया। वे रोगियों के शरीर पर हाथ फिराते हुए लेटिन भाषा में उनके स्वस्थ होने की कामना करते थे, जिसके प्रभाव से रोगी की रोग निवृत्ति शीघ्र ही हो जाती थी।

यद्यपि आधुनिक युग में यह उपलब्धि अभूतपूर्व समझी जाती है, किन्तु यदि प्राचीन योगियों की सिद्धि पर प्रकाश डालें तो उस समय इस प्रकार की शक्ति बहुत-से योगियों और सन्त-महात्माओं के पास थी।

इंग्लैंड के डॉ. जॉन एलिस्टन भी इसी पद्धति का प्रयोग करने लगे और उसमें उन्हें आशातीत सफलता मिली। बाद में मानकेस्टर इंग्लैंड के डॉ. जेम्सब्रेड ने इस खोज में एक नई प्रगति की, जिससे यह मान्यता बनी कि कोई भी व्यक्ति, चाहे वह स्वस्थ हो अथवा रोगी, स्वयं में ही

सम्मोहन शक्ति से सम्पन्न है और वह उसे स्वयं ही व्यक्त भी कर सकता है।

डॉ० जेम्सब्रेड के अनुसार यदि कोई मनुष्य किसी चमकदार बिन्दु पर अपनी दृष्टि एकाग्र करने का प्रयत्न करे अथवा अपने चित्तको एकाग्र और तन्मयता युक्त करके किसी केन्द्र बिन्दु पर लगा दे तो उसे स्वयं ही हिप्नोटिक निद्रा की प्राप्ति हो सकती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि जब रोगी को अपनी इस शक्ति पर पूर्ण रूप से विश्वास हो जाता है तभी वह अपने मस्तिष्क को एकाग्र करके सम्मोहक के शब्द पर केन्द्रित कर पाता है। यही कारण है कि सम्मोहक के शब्दों से, अथवा उसके द्वारा स्पर्श करने मात्र से नींद आ जाती है।

योग-शक्ति की न्यूनता-अधिकता योगी के प्रयत्न पर ही निर्भर है। जो लोग जितना ही अधिक प्रयत्न करते हैं, वे अपनी योग शक्ति को उतना ही अधिक बढ़ा लेते हैं। शक्ति वृद्धि में दूसरी सहायता मिलती है आत्मविश्वास से। अपने पर विश्वास करो तो सभी कुछ सरल हो जायगा। किन्तु विश्वास न करने की स्थिति में कितना ही परिश्रम करो, दिन-रात एक कर दो, लाभ कुछ भी नहीं हो सकेगा। ईसीलिये 'विश्वासं फलदायकं' वाली लोकोक्ति पर ध्यान देना बहुत आवश्यक है। वही सिद्धि का परम सूत्र है।

सम्मोहन का चमत्कार

एक सम्मोहक (हिप्नाटिस्ट) ने बताया था कि 'हिप्नाटिज्म चाहे आधुनिक नामकरण में प्रकट हुआ हो, किन्तु है यह पूर्ण रूप से प्राचीन क्रिया। उनका मत था कि हिप्नाटिज्म से उतनी शक्ति प्राप्त नहीं हो सकती, जितनी कि भारतीय प्राचीन विद्या से हो सकी है।

उन्होंने अपने एक पात्र के विषय में बताया कि आरम्भ में उसे सम्मोहन शक्ति पर किंचित् भी विश्वास नहीं था। वह समझता था कि जो पात्र सम्मोहक के संकेत पर चलते देखे जाते हैं, उनका वह चलना स्वाभाविक नहीं। या तो उसमें कोई ट्रिक है अथवा सम्मोहक और पात्र का सम्मिलित षडयन्त्र है।

जब उन्होंने उसे विश्वास दिलाने का प्रयत्न किया तो वह बोला—'अच्छा, मैं चुपचाप बैठा जाता हूँ। किन्तु यदि आप मेरे अंगों का चालन अपनी शक्ति से कर सकेंगे, तभी मैं आपकी विद्या में शक्ति होना मानूँगा, अन्यथा नहीं।

उन्होंने पात्र की चुनौती स्वीकार कर उसे सम्मोहित किया और भावना देते हुए बोले—'तुम्हारा एक हाथ दूसरे हाथ पर और दूसरा हाथ प्रथम हाथ पर निरन्तर चलेगा। देखो, तुम्हारा एक हाथ कुर्सी के हत्थे पर रखा है, और दूसरा हाथ उस हाथ पर रखा जाने के लिये उठ रहा है।'

तभी दर्शकों ने देखा कि पात्र का दूसरा हाथ उठ कर कुर्सी के हत्थे पर रखे हुए पहिले हाथ पर जा पहुँचा और तभी पहिला हाथ उसके नीचे से तेजी से निकल कर दूसरे हाथ के ऊपर पहुँच गया। इस प्रकार कभी एक हाथ ऊपर तो कभी दूसरा हाथ ऊपर, स्वचालित यन्त्र के समान दोनों हाथ तेजी से बराबर चलते रहे।

उक्त घटना को देख कर सभी दर्शक हैरान थे। उन्हें सम्मोहन की शक्ति पर पूर्ण रूप से विश्वास हो गया था। किन्तु जिस पात्र के हाथों का संचालन स्वतः होता रहा, उसे सम्मोहित तन्द्रा के टूटने पर इस बात का कुछ भी ध्यान नहीं रहा, इसलिए उसने बड़ी कठिनाई से इस पर विश्वास किया कि उसके हाथों का स्वसंचालन लगभग बीस मिनट तक निरन्तर होता रहा है।

उनका यह भी कहना था कि आधुनिक विधि के अतिरिक्त प्राचीन विधि का अभ्यास भी उन्होंने किया था, इसलिए आवश्यक होने पर वे दोनों का ही प्रयोग कर लिया करते थे।

अनजानी बातों की जानकारी

एक अन्य सम्मोहक का कहना था कि वे सामान्य प्रदर्शन में सम्मोहन विधि का प्रयोग करते हैं, किन्तु कभी-कभी किसी विशिष्ट व्यक्ति के आग्रहवश जब कुछ चमत्कार प्रदर्शन की आवश्यकता होती है, तब वे भारतीय प्रकार की त्राटक विधि से काम लेते हैं। उनका विश्वास था कि त्राटक विधि के द्वारा जो सफलता मिलती है, वह अन्य किसी विधि से नहीं मिल पाती।

उनका विश्वास है कि त्राटक के द्वारा इतनी तीव्र दृष्टि प्राप्त हो सकती है, जिसे दिव्य दृष्टि भी कह सकते हैं। लाखों मील दूर की बात जानने-देखने का उपयुक्त साधद त्राटक ही है। अनेक योगी इसी विधि के द्वारा लाखों मील दूर बैठे ही वहाँ की घटनाओं को जान लेते थे।

उनका कहना था कि सम्नोहित अवस्था में किसी अनजान भाषा का पढ़ा जाना, किसी अनजानी बात को जान लेना, किसके जेब में क्या है यह बता देना आदि तो सामान्य सम्मोहन-क्रिया से भी हो जाते हैं। किन्तु किसी विशेष बात के विषय में जानकारी देने में जब हिप्नोटिज्म विधि से काम नहीं चलता, तब प्राचीन योग-विधि से ही काम लेना होता है।

उन्होंने यह भी बताया कि अपनी शक्ति के बल पर वे चाहे जिसकी नाड़ी की गति बढ़ा सकते हैं। हृदय की गति में भी वृद्धि कर सकते हैं, शरीर के तापमान में परिवर्तन कर सकते हैं। किसी के शरीर को बहुत ठण्डा या बहुत गर्म कर सकते है। किसी की वाणी को प्रभावित कर

सकते हैं, किसी की श्रवण शक्ति को भी घटा-बढ़ा सकते हैं। किन्तु यह अवस्थाएँ प्रायः अस्थायी रूप से ही की जा सकती हैं।

अर्द्धांग का संचालन भिन्न दिशा में

सम्मोहन शक्ति के प्रभाव से सम्मोहित व्यक्ति के आधे अंग का ही संचालन करना चाहें तो कर सकते हैं। यह क्रिया आधुनिक भाषा में 'हेमो हिप्नोसिस' कहलाती है।

डॉ० चारकाट प्रभृति कुछ विद्वानों ने इस प्रकार के परीक्षणों में भी सफलता प्राप्त की थी कि पात्र के दोनों अर्धांगों को पृथक्पृथक् रूप से प्रभावित करें जिसकों उनकी क्रियाओं का संचालन भी पृथक्-पृथक् दिशा में या स्वतन्त्र रूप से हो सके। उदाहरण के लिए निम्न घटना का वर्णन पर्याप्त होगा—

एक विशेषज्ञ ने बताया कि उसने अपने पात्र को सुझाव दिया कि 'तुम्हारी दाँयी आँख दाँयी ओर को ओर बाँयी आँख बाँयी ओर को घूमने लगे। परिणाम इस सुझाव के अनुसार ही हुआ और दर्शक उसे देख कर आश्चर्य करने लगे।

इस परीक्षण का एक बहुव उपयोगी फल सामने आया कि नेत्र रोगों के अनेक रोगी उन्होंने अच्छे कर दिये। एक अन्य चिकित्सक इसी प्रणाली के द्वारा अर्द्धांग वात के रोगियों को रोग मुक्त करने में सफलता प्राप्त कर चुके हैं। विदेशों में अनेक चिकित्सक अपने रोगियों पर इस विधि का प्रयोग करते हैं।

नेत्रों में चुम्बक शक्ति

त्राटक साधना के अभ्यास से नेत्रों में चुम्बक शक्ति बढ़ जाती है।

ऐसे साधक की आँखों में जो चमक उत्पन्न होती है, वह असामान्य रूप से दिखाई देती है।

एक साधक सुई पर दृष्टि टिकाने का अभ्यास करते थे। उनका कथन था कि मैं चलती हुई घड़ी को रोक सकता हूँ। बस घण्टा बताने वाली छोटी सुई पर स्थिर रूप से दृष्टिपात करने की आवश्यकता होगी मुझे।

उसका यह भी दावा था कि घड़ी की सुइयाँ पीछे की ओर घूमने लग सकती है। मजे की बात यह कि घड़ी सीधी चल रही है और सुइयाँ पीछे को घूम रही है।

इसका सिद्धान्त बताते हुए डॉ० मेस्मर का कहना था कि मानव शरीर में 'एनीमल मैग्नेट' है। नेत्र-दृष्टि को स्थिर करने के अभ्यास के अनुसार ही यह शक्ति नियमानुसार बढ़ती है। जो लोग अभ्यास छोड़ देते हैं, उनकी चुम्बक शक्ति घट भी जाती है। इसलिए उत्कर्ष चाहने वालों को अभ्यास तो कभी छोड़ना ही नहीं चाहिए।

यदि नेत्रों की चुम्बक शक्ति बढ़ जाती है तो आप प्रत्येक प्राणी को अपने आकर्षण में बाँध सकते हैं। एक व्यक्ति जो बहुत ही साधारण प्रतीत होता था, उसे देखते ही लगता था जैसे वह अनजाने ही खींच रहा है। बाद में पता चला कि वह व्यक्ति हिप्नोटिज्म का अभ्यास कर रहा है।

(समाप्त)

अ. भा. ओंकार परिवार की स्थापना

ॐ परमात्मा का सर्वश्रेष्ठ व स्वाभाविक नाम हैं। इसे मन्त्र शिरोमणि, मन्त्र सम्राट, मन्त्र राज, बीजमन्त्र और मन्त्रों का सेतु आदि उपाधियों से विभूपित किया जाता है। इसे श्रेष्ठतम् महानतम् और पवित्रतम् मन्त्र की संज्ञा भी दी जाती है। सारे विश्व में इसकी तुलना का कोई मन्त्र नहीं हैं। ॐ सभी मन्त्रों को अपनी शक्ति से प्रभावित करता है। सभी मन्त्रों की शक्ति ओंकार की ही शक्ति है। यह शक्ति और सिद्धिदाता हैं। भौतिक व आत्मिक उत्थान के लिए कोई भी दूसरी श्रेष्ठ व सरल साधना नहीं है।

सभी ऋषिमुनि ॐ की शक्ति और साधना से ही अपना आत्मिक उत्थान करते रहे हैं। परन्तु आज आश्चर्य है कि ॐ का अन्य मन्त्रों की तरह व्यापक प्रचार नहीं है। इस कमी का अनुभव करते हुए अ० भा० ओंकार परिवार की स्थापना की गई है। आप भी अपने यहाँ इसका एक प्रचार केन्द्र स्थापित करें। शाखा स्थापना का सारा साहित्य निःशुल्क रूप से प्रधान कार्यालय, बरेली से मँगवा लें, आपको केवल इतना करना है कि स्वयं ओंकारोपासना आरम्भ करके ४ अन्य मित्रों व सम्बन्धियों को प्रेरित करें और सभी संकल्प पत्र व शाखा स्थापना का प्रार्थना पत्र प्रधान कार्यालय को भिजवा दें। इस वर्ष २७००० साधकों द्वारा ६०० करोड़ मन्त्रों के जप का महापुरश्चरण पूर्ण किया जाना है। आशा है ओंकार को जन-जन का मन्त्र बनाने के इस श्रेष्ठतम् आध्यात्मिक महायज्ञ में सम्मिलित होकर महान् पुण्य के भागी बनेंगे।

विनीत :—

संस्कृति संस्थान — **चमनलाल गौतम**

खवाजाकुतुब, वेदनगर, बरेली–२४३००३ (उ.प्र.)

एक मौन व्यक्तित्व का मौन समर्पण

★

डा० चमनलाल गौतम-एक व्यक्ति का नहीं वरन् ऐसे विशाल धार्मि संस्थान का नाम है जो सतत् २४ वर्षों से ऋषि प्रणीत आर्ष साहित्य के शो प्रकाशन और व्यापक साहित्य प्रचार का कार्य देश विदेश में करता रहा है यह उनकी तप साधना का ही परिणाम है कि किसी भी आर्थिक सहयोग विना वेद, उपनिषद्, दर्शन, स्मृतियाँ, पुराण व मन्त्र-तन्त्र आदि साधनात्म साहित्य की ३०० से अधिक पुस्तकों को प्रकाशित करके घर-घर में पहुँचा की पवित्रतम साधना कर रहे हैं। मन्त्र-तन्त्र, योग, वेदान्त व अन्य धार्मि विषयों पर १५० खोज पूर्ण ग्रन्थों का लेखन, सम्पादन एक ऐसा अविस्मरणी व आसाधारण कार्य है जिस पर उनके अथक श्रम, गम्भीर अध्ययन, त प्रतिभा और मौलिक सूझ-बूझ की स्पष्ट छाप दिखाई देती है। स्वस साहित्य की रचना और प्रचार का उनकी जीवन योजना का यह पह चरण पूरा हुआ।

पिछले २४ वर्षों से लगातार चल रही अध्यात्मिक साधना महापुरश्चरण का दूसरा चरण भी समाप्त हो रहा है। तीसरे चर आध्यात्मिक साधनाओं और अनुभूतियों के विश्वव्यापी विस्तार का शुभार अ० भा० ओंकार परिवार की स्थापना के साथ बसन्तपञ्चमी की प पवित्र वेला के साथ हो गया है। अत: उनका शेष जीवन तीसरे चरण सफलता, ओंकार परिवार की शाखाओं के व्यापक विस्तार के माध्यम करोड़ों व्यक्तियों को ओंकार साधना में प्रविष्ट करके उच्च आध्यात्मिक भूमि में प्रशस्त करना, ओंकार अथवा उच्च आध्यात्मिक साहित्य की रचन प्रचार-प्रसार को समर्पित है।

स्वामी सत्य भ...

उत्कृष्ट व मौलिक अद्वितीय-ग्रन्थ

१—मंत्र-महाविज्ञान ४ खण्ड	...	४४)
२—मंत्र योग	...	१०)
३—वैदिक मंत्र विद्या	...	१०)
४—मंत्र शक्ति से रोग निवारण	...	६)
५—मंत्र शक्ति से विपत्ति निवारण	...	६)
६—मंत्र शक्ति से कामना सिद्धि	...	६)
७—मंत्र शक्ति के अद्भुत चमत्कार	...	५)२५
८—ओंकार सिद्धि	...	६)२५
९—तंत्र महासाधना	...	११)
१०—शारदा तिलक	...	१२)
११—लक्ष्मी सिद्धि	...	८)७५
१२—देव रहस्य	...	११)
१३—विष्णु रहस्य	...	३)७५
१४—शिव रहस्य	...	६)
१५—हस्तरेखा महाविज्ञान	...	११)
१६—ज्ञानेश्वरी भगवद्गीता	...	१२)
१७—प्राणायाम के असाधारण प्रयोग	...	६)५०
१८—दास बोध	...	१०)
१९—षोडश संस्कार पद्धति	...	९)
२०—दृष्टान्त सरित सागर	...	११)
२१—शक्ति सम्राट कैसे बनें ?	...	४)
२२—चिन्तायें कैसे दूर हों ?	...	४)७५
२३—तंत्र विज्ञान	...	७)
२४—तंत्र रहस्य	...	७)
२५—तंत्र महाविद्या	...	७)
२६—तंत्र महासिद्धि	...	७)

प्रकाशक :— संस्कृति संस्थान, ख्वाजा कुतुब, वेद नगर,
बरेली-२४३००३ (उ० प्र०)